CORE
Metadata, citation and similar papers at core.ac.uk
Provided by Etheses - A Saurashtra University Library Service

Saurashtra University
Re – Accredited Grade 'B' by NAAC
(CGPA 2.93)

Gandhi, M. G., 2005, "*इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन*", thesis PhD, Saurashtra University

http://etheses.saurashtrauniversity.edu/id/eprint/708

Copyright and moral rights for this thesis are retained by the author

A copy can be downloaded for personal non-commercial research or study, without prior permission or charge.

This thesis cannot be reproduced or quoted extensively from without first obtaining permission in writing from the Author.

The content must not be changed in any way or sold commercially in any format or medium without the formal permission of the Author

When referring to this work, full bibliographic details including the author, title, awarding institution and date of the thesis must be given.

Saurashtra University Theses Service
http://etheses.saurashtrauniversity.edu
repository@sauuni.ernet.in

© The Author

ॐ

इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन

सौराष्ट्र विश्वविद्यालय की पीएच डी(हिन्दी) की

उपाधि के लिए प्रस्तुत किये जानेवाले शोध–प्रबन्ध की रूपरेखा

: प्रस्तुत कर्ता :

प्रा एम जी गांधी

श्रीमती जे जे कुंडलिया

आर्ट्स और कॉमर्स कॉलेज,

राजकोट

: निर्देशक :

डॉ एच टी ठक्कर

अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,

मातुश्री वीरबाईमाँ महिला आर्ट्स कॉलेज,

राजकोट

वर्ष–२००५

प्रमाणपत्र

मैं सत्यापित करता हूँ कि श्री मुलजीभाई गणेशभाई गांधी ने सौराष्ट्र विश्वविद्यालय राजकोट में पीएच;डी (हिन्दी) के लिए ''इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन'' विषय को लेकर प्रस्तुत शोध प्रबन्ध मेरे निर्देशन में तैयार किया है । श्री गांधी ने इस विषय पर अपनी ओर से मौलिक निष्कर्ष निकाले हैं और विषय को यथाशक्ति स्पष्ट किया है।

मैं प्रमाणित करता हूँ कि इस शोध प्रबन्ध का कोई अंश अन्यत्र कहीं पर उन्होंने प्रकाशित नहीं किया है और न ही कोई अन्य उपयोग किया है।

दिनांक :

स्थल : राजकोट

निर्देशक

डॉ. एच. टी. ठक्कर
अध्यक्ष, हिन्दी विभाग,
मातुश्री वीरबाइमाँ महिला आर्ट्स कोलेज,
राजकोट ।

भूमिका

१ विषयः निर्धारण–विषय प्रवेश :

प्रस्तुत शोध–प्रबंध का विषय है ''इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन ।''

संस्कृत नाट्य साहित्य एवं प्रबन्ध काव्य में नायक संबंधित भारतीय दृष्टिकोण सुस्पष्ट है। इनमें निरूपित नायक के लक्षणों का अनुधावन करने पर एक बात उभरकर सामने आती है, वह है नायक जो समाज के उच्च वर्ग से संबंधित है। प्रारंभिक काल में ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य ही नायकत्व धारण करने योग्य समझे जाते थे और नायक में उदात्तगुणों की ही कल्पना की जाती थी। इसी के प्रभाव में हिन्दी साहित्य में भी काव्य और नाट्य साहित्य में नायक संबंधित पूर्व परम्परा को निभाने का सचेत प्रयास किया गया। किन्तु हिन्दी उपन्यास साहित्य के विकास के साथ–साथ नायक संबंधित पूर्वधारणाओं में आमूलचूल परिवर्तन आया। मेरी यह विनम्र धारणा है कि उपन्यास मानव जीवन को बड़ी ही निकटता से देखता है और उसमें जीवन की विशद् व्याख्या भी मिलती है। उपन्यास साहित्य को ही यह गौरव प्राप्त है कि उसने बड़े–बड़े प्रासादों में जिये जाते जीवन और उस प्रभुसता संपन्न मानवों के अधिकार क्षेत्र में स्थित नायकत्व को निकाल बाहर कर जन साधारण के साथ जोडने का उपक्रम रचा ।

यह सही है कि प्रेमचंद पूर्व रचे गये उपन्यास साहित्य में जो नायक उभरकर हमारे समक्ष उपस्थित हुए हैं– वे या तो अति मानवीय शक्तियों से युक्त ऐयार थे या समाज के उच्चवर्गीय जीवन की गतिविधियों के सूत्रधार रूप नायक थे । प्रेमचन्द हिन्दी के पहले उपन्यासकार हैं जिनके उपन्यासों के नायक समाज जीवन के उन रूपों की व्यंजना करते हैं, जो जन साधारण के जीवन संघर्षो से संबंधित हैं, समाज की बहुविध समस्याओं के भोक्ता हैं और दबे–कुचले समाज के प्रतिनिधि भी हैं । प्रेमचंद की दृष्टि समाजोन्मुखीथी अतः उनके नायक समाज की बाह्य समस्याओं से जूझते पाये जाते हैं। पर प्रेमचंदने उनकी भीतरी टूटन को

भी स्पर्श किया है। बावजूद इसके उनके भीतर भी उथल पुथल, दर्द या वेदना के मनोविश्लेषण पर उन्होंने जोर नहीं किया है।

हिन्दी उपन्यास साहित्य में जैनेन्द्र के आगमन के साथ ही साथ मनोविश्लेषण का सूत्रपात हुआ । पश्चिमी विचारक फ्रायड, एडलर और युंग के सिद्धान्तों का प्रभाव हिन्दी के जिन अन्य उपन्यासकारों पर पड़ा उनमें इलाचन्द्र जोशी, जैनेन्द्र और अज्ञेय का नाम भी बडे आदर के साथ लिया जाता हैं । इसी के साथ हिन्दी उपन्यास साहित्य में इन नायक सम्बन्धित पूर्वधारणाओं में परिवर्तन आया हैं । प्रेमचंद युग तक नायक के आचरण या व्यवहार बाह्य परिस्थितियों की प्रतिक्रिया के रूप में दृष्टिसमक्ष रहा, जबकि प्रेमचंदोत्तर युग में मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों के उपन्यास साहित्य में नायक का आचरण उनके भीतर उठती संवेदनाओं एवं उत्प्रेरणाओं के अनुसार होता गया । समीक्ष कों का मंतव्य रहा है कि इलाचन्द्र शुद्ध मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार हैं । वे मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के आधार पर अपने उपन्यासों में नायक का निर्माण करते हैं और फिर उन सिद्धान्तों का प्रतिपादन करते हैं ।

छात्रावस्था से ही मुझे उपन्यास साहित्य में विशेष रूचि रही है । अध्यापकीय व्यवसाय के दौरान मैने इलाचन्द्र जोशी का 'प्रेत और छाया' पढा । उनके नायक पारसनाथ से मैं प्रभावित हुआ और मैंने इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास साहित्य पर शोध–कार्य करने का निश्चय किया । अब मेरे सामने शोध–निर्देशक निर्धारित करने का प्रश्न आया । मेरी पूर्व अध्यक्षा प्रा निरुपमाजी रावलने डॉ एच टी ठक्कर साहब का संपर्क करने का संकेत दिया । फल स्वरूप मैंने उनसे मिलने का रास्ता निकाला । किन्तु मेरे पडोश में रहनेवाले डॉ दिनेशचन्द्र चौबीसा जो डॉ ठक्कर साहब के सहकार्यकर हैं, उनके साथ की बातचीत में मैंने पाया कि मैं एक बार उनसे मिलूँ । मेरी पहली ही मुलाकात में पता चल गया कि वे मिलने योग्य व्यक्ति हैं । उन्होंने प्रेम से मेरे साथ विषय की चर्चा की और मुझे 'इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में नायक का मनोविश्लेषात्मक अनुशीलन' विषय देकर पंजीकृत किया ।

२ विषय का महत्त्व :

उपन्यास में कथावस्तु के बाद नायक ही सबसे महत्त्वपूर्ण माना जाता है । उपन्यासकार की मनोसृष्टि (उद्देश्य) नायक के द्वारा ही पाठक के समक्ष प्रकटित होता है। जोशीजीने भी अपने उपन्यास साहित्य के माध्यम से ऐसे नायकों का निर्माण किया हैं, जो समाज में व्याप्त विकृतियों के मूल में मनोवैज्ञानिक स्थितियों की ओर संकेत कर स्वस्थ व्यक्तित्त्व निर्माण में आवश्यक सामाजिक वातावरण पर हमारा ध्यान आकर्षित करते हैं । किन्तु मनोवैज्ञानिक उपन्यास के नायक की अवस्था कुछ अलग है। उपन्यासकार के रूप में इनकी भूमिका मानव–मन की गहराई में गोता लगाकर आचरण के मूल रहस्य को प्रस्तुत करना है। किन्तु विभिन्न परिस्थितियों में नायक की उलझन, द्वन्द्व, कुंठा आदि का निरूपण आसान नहीं होता। मनोविश्लेषण मूलतः चिकित्सा–शास्त्र से सम्बन्धित हैं । मानव के अंतरंग व्यापार को परखकर, उसका इलाज कर उसे स्वस्थ सामाजिक व्यक्तित्व प्रदान करना मनोवैज्ञानिक साहित्यकार का मूल लक्ष्य होता हैं। इस दृष्टि से समाज रूपी शरीर को स्वस्थ बनाने में मनोविश्लेषण का महत्त्वपूर्ण योगदान हो सकता है । आज की सामाजिक स्थिति में व्यक्ति अधिकाधिक अस्वस्थ होता जा रहा है, और मनोविश्लेषण से ऐसे अस्वस्थ व्यक्ति की अकुलाहट को अभिव्यक्ति प्रदान कर उसकी ग्रंथिओं का मूलोच्छेदन करना मूल लक्ष्य होता है । मनुष्य अगर विकृत अहम् को, रवासकर के पुरुष अपने अहम् को छोड दें तो समाज में सामजस्यता आ सकती हैं । इससे समाज को लाभ हो सकता है ।

३ विषय के संदर्भ में सामग्री संचयन :

'इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन ।' विषय पर अध्ययन करने हेतु सामग्री संचयन को तीन खंडो में विभक्त किया हैं जो निम्नांकित है –

(१) मूल उपन्यास

(२) विविध प्रकट अप्रकट शोध–प्रबन्ध और

(३) पत्र–पत्रिकाएँ ।

	उपन्यास	लेखक
(१)	लज्जा –	इलाचन्द्र जोशी
(२)	संन्यासी –	इलाचन्द्र जोशी
(३)	पर्दे की रानी –	इलाचन्द्र जोशी
(४)	प्रेत और छाया –	इलाचन्द्र जोशी
(५)	निर्वासित –	इलाचन्द्र जोशी
(६)	मुक्तिपथ –	इलाचन्द्र जोशी
(७)	सुबह के भूले –	इलाचन्द्र जोशी
(८)	त्याग का भोग –	इलाचन्द्र जोशी
(९)	जहाज का पंछी –	इलाचन्द्र जोशी
(१०)	ऋतुचक्र –	इलाचन्द्र जोशी
(११)	भूत का भविषय –	इलाचन्द्र जोशी
(१२)	कवि की प्रेयसी –	इलाचन्द्र जोशी

उपर्युक्त उपन्यासों के नायकों को मैंने मनोवैज्ञानिक सिद्धान्त–चेतन मन, अचेतन मन, अर्धचेतन मन, इदम्, अहम्, परम अहम्, द्वन्द्व, कुंठा, तादात्म्य, स्वप्न सिद्धान्त, जीवनवृत्ति, मरणवृत्ति, फ्रायड का लिबिड़ो सिद्धांत, इड़िपस ग्रंथि, इलेकट्रा ग्रंथि, विस्थापन, प्रक्षेपण, कल्पना, हीनता ग्रंथि, श्रेष्ठता ग्रंथि, सामूहिक अचेतन आदि को केन्द्रस्थ कर मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन किया हैं । निर्देशित उपन्यासों के नायक निम्नांकित हैं –

	उपन्यास	नायक
(१)	लज्जा –	राजू
(२)	संन्यासी –	नंदकिशोर
(३)	पर्दे की रानी –	इन्द्रमोहन
(४)	प्रेत और छाया –	पारसनाथ
(५)	निर्वासित –	महीप
(६)	मुक्तिपथ –	राजीव
(७)	सुबह के भूले –	किसन
(८)	त्याग का भोग –	नृपेन्द्र रंजन
(९)	जहाज का पंछी –	विलक्षणनायक (''मै '' शैली)
(१०)	ऋतुचक्र –	चिंतनशील दादा
(११)	भूत का भविष्य –	भूतनाथ
(१२)	कवि की प्रेयसी –	सोमिल ।

ये उपन्यास और इनके नायक का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन करने के लिए फ्रायड, एड़लर और युंग की मनोवैज्ञानिक विचारधारा और सिद्धांतो का यथायोग्य उपयोग मैंने किया हैं ।

प्रस्तुत शोध–विषय का शीर्षक 'इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन' अपने आप में मौलिक हैं । विविध शोध–प्रबन्धों, पत्र–पत्रिकाओं में लिखित आलेखों एवं इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से विश्लेषण अवश्य हुआ है, किंतु मेरी जानकारी

में गुजरात की किसी भी युनिवर्सिटी में इनके उपन्यासों में नायक के मनोविश्लेषण को विषय बनाकर शोध कार्य नहीं हुआ है अत: अपने आप में प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध का विषय मौलिक हैं ।

४ विषय और उसके निरूपण की क्षेत्र सीमा :

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध में मैंने इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में नायक का मनोवैज्ञानिक सिद्धांतो के आधार पर विश्लेषण किया हैं । इस में पाश्चात्य विद्वान फ्रायड, एडलर और युंग के सिद्धांतो के साथ–साथ सामान्य मनोविज्ञान का भी आधार लिया है। मैंने इसमें नायक की परिभाषा, पूर्व प्रेमचंद युगीन उपन्यासों में नायक, प्रेमचंद युगीन उपन्यासों में नायक तथा प्रेमचंदोत्तर युगीन उपन्यासों में नायक का विश्लेषण करते हुए इलाचन्द्र जोशी, अज्ञेय और जैनेन्द्र के नायकों का तुलनात्मक मनोविश्लेषण किया हैं। संक्षेप में कहें तो इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास साहित्य में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन करना ही मेरे शोध प्रबन्ध का मूल लक्ष्य हैं ।

५ प्रबन्ध परिचय :

प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध की सामग्री छ: अध्यायों में विभक्त की है।

प्रथम अध्याय में श्री इलाचन्द्र जोशी का जीवन वृत्त, बचपन, शिक्षा–दीक्षा एवं उनके सृजनात्मक व्यक्तित्व के स्त्रोतों पर प्रकाश डाला है।

द्वितीय अध्याय में नायक शब्द की व्युत्पत्ति एवं परिभाषा, शब्दकोशो के आधार पर नायक के लक्षण । नायक, खलनायक, सहनायक तथा भारतीय एवं पाश्चात्य दृष्टिकोण से नायक का चित्रण किया हैं ।

तृतीय अध्याय के अंतर्गत उपन्यास साहित्य में नायक का मनोविश्लेषाणात्मक अध्ययन पूर्व प्रेमचंद युग से लेकर प्रेमचंदोत्तर युग के कुछ उपन्यसाकारों के उपन्यासों के नायक का चित्रण किया हैं।

चतुर्थ अध्याय में इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास साहित्य के सभी नायको का मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अलग अलग सिद्धांतो के आधार पर नायक के व्यक्तित्व का मनोविश्लेषणात्मक शैली के आधार पर विश्लेषण किया हैं ।

पंचम् अध्याय में हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों की तिकडी जैनेन्द्र, अज्ञेय और इलाचन्द्र जोशी के नायकों का तुलनात्मक मनोविश्लेषण किया हैं ।

षष्ठम् अध्याय में उपसंहार, निष्कर्ष, उपलब्धियाँ एवं सीमाओं पर प्रकाश डाला हैं ।

६ कृतज्ञताज्ञापन :

प्रस्तुत शोधकार्य के आरंभ से लेकर इतिश्री तक प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से जिन्होंने मुझे प्रेरणा, उत्साह एवं मार्गदर्शन दिया हैं उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना मेरा परम कर्तव्य हैं । हृदयस्थ भावना कों शब्दों में व्यक्त करना आसान नहीं हैं । अंग्रेजीमें भी उक्ति हैं "WHEN THE HEART IS FULL THE TONGUE IS TIED." फिर भी मेरी भावनाएँ यहाँ व्यक्त कर कृतकृत्य हो रहा हूँ ।

कबीर के अनुसार भगवान से भी पहले गुरु हैं । क्योंकि गुरु ही सही रास्ता बता सकते हैं । ठीक इसी प्रकार अध्ययन के क्षेत्रमें विद्या–गुरु ही सर्वोपरि हैं । मुझे प्रबन्ध लेखन के लिए प्रेरित करनेवाले श्रद्धेय परमादरणीय डॉ एच टी ठक्कर साहब (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, मातुश्री वीरबाई माँ महिला आर्ट्स कॉलेज, राजकोट एवं अध्यक्ष, हिन्दी अभ्यास समिति, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट) के प्रति मैं अपनी कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ । विषय चयन से लेकर उसकी पूर्णता तक समय–समय पर प्रेरणास्त्रोत बने रहकर, मेरी हर कठिनाई का समाधान करते हुए मेरा मार्गदर्शन किया हैं । उन्हें मैं कभी नहीं भूल पाऊँगा। मैं हृदय से आपके प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ ।

परम श्रद्धेय डॉ एच टी ठक्कर साहबने समय–समय पर अमूल्य सुझाव देकर मेरे श्रम को सार्थकता प्रदान की है। अत: मैं सुखद परितृप्ति का अनुभव करता हूँ । आपने सिर्फ प्रबन्ध में ही मार्गदर्शन दिया हो

ऐसा नहीं, बल्कि मेरे पूरे अध्यापकीय जीवन को भी सँवार दिया है। आपके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन के लिए मेरे शब्दों में सामर्थ्य नहीं हैं ।

प्रस्तुत शोध कार्य में मुझे जिल्ला ग्रंथालय, लेंग ग्रंथालय, मेरे कॉलेज का ग्रंथालय, वीरबाई माँ महिला आर्टस कॉलेज का ग्रंथालय, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय का ग्रंथालय, गुजरात विधाापीठ का ग्रंथालय, एम जे–ग्रंथालय अहमदाबाद, गुरुकुल महिला कॉलेज, पोरबंदर का ग्रंथालय आदि से भी मुझे बडी सहायता मिली हैं । मैं उन सभी ग्रंथालयों के ग्रंथपाल महोदय/महोदया का भी आभारी हूँ ।

शोध कार्य के लिए प्रेरित करनेवाले मेरे बडे भाई साहब श्री खुशालभाई गांधी के ऋण से मुक्त हो पाना संभव ही नहीं हैं । उन्होंने मुझे हरबार आगे बढने की प्रेरणा एवं सुविधा दी हैं । उनके चरणों में शत–शत वंदन ।

पोरबंदर गुरुकृल महिला कॉलेज की प्रो जयश्री बहन बारोट, कुंडलिया आर्टस कॉलेज, राजकोट की कार्यकारी आचार्या महोदया डॉ स्मिता बहन झाला, संस्कृत के विद्वान प्रो मेहता साहब, प्रो अभी बहन, डॉ गिरिशभाई सोलंकीने भी मुझे अहेतुकी सहायता की हैं, मैं उन सभी के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ ।

राजकोट :

दिनांक :

विनीत

***

अनुक्रमणिका

* **प्रथम अध्याय :** १-४७

श्री इलाचन्द्र जोशी का जीवन वृत्त एवं सृजनात्मक व्यक्तित्व ।

* **द्वितीय अध्याय :** ४८-८२

नायक : अर्थ, स्वरूप और अवधारणा

* **तृतीय अध्याय :** ८३-१०३

उपन्यास साहित्य में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन

– पूर्व प्रेमचंद युग ।

– प्रेमचंद युग ।

– प्रेमचंदोत्तर युग ।

* **चतुर्थ अध्याय :** १०४-१४५

इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास साहित्य में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन ।

* **पंचम् अध्याय :** १४६-१६१

इलाचन्द्र, जैनेन्द्र और अज्ञेय के नायकों का तुलनात्मक मनोविश्लेषण ।

* **षष्टम् अध्याय :** १६२-१६९

उपसंहार, निष्कर्ष, उपलब्धियॉ और सीमाएँ ।

* **ग्रंथानुक्रम :** १७०-१८०

(अ) आधार ग्रंथ । १७०-१७१

– इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास

(ब) सहायक ग्रंथ सूची १७२-१७७

(क) कोश (हिन्दी) । १७८

(ड) कोश (अंग्रेजी) । १७९

(इ) पत्र–पत्रिकाएँ (हिन्दी) । १८०

***

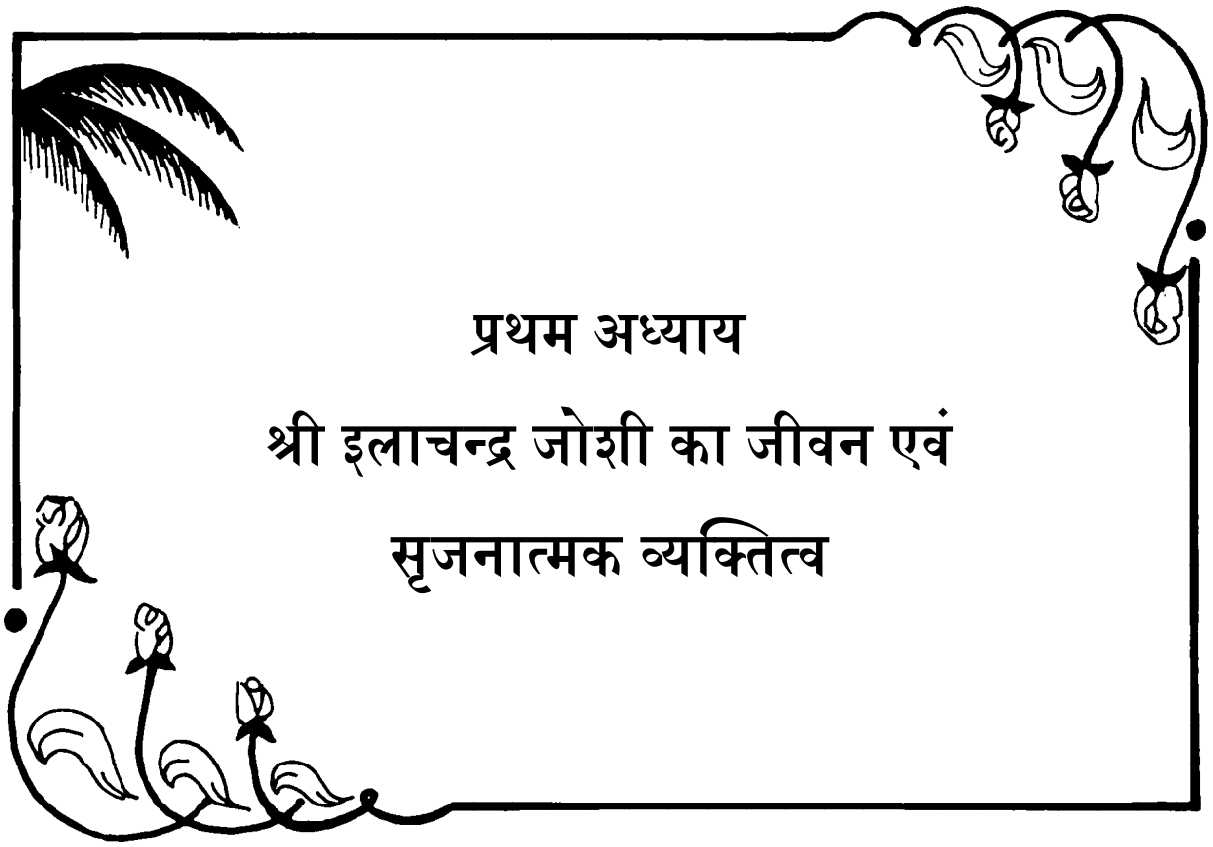

प्रथम अध्याय

श्री इलाचन्द्र जोशी का जीवन एवं सृजनात्मक व्यक्तित्व

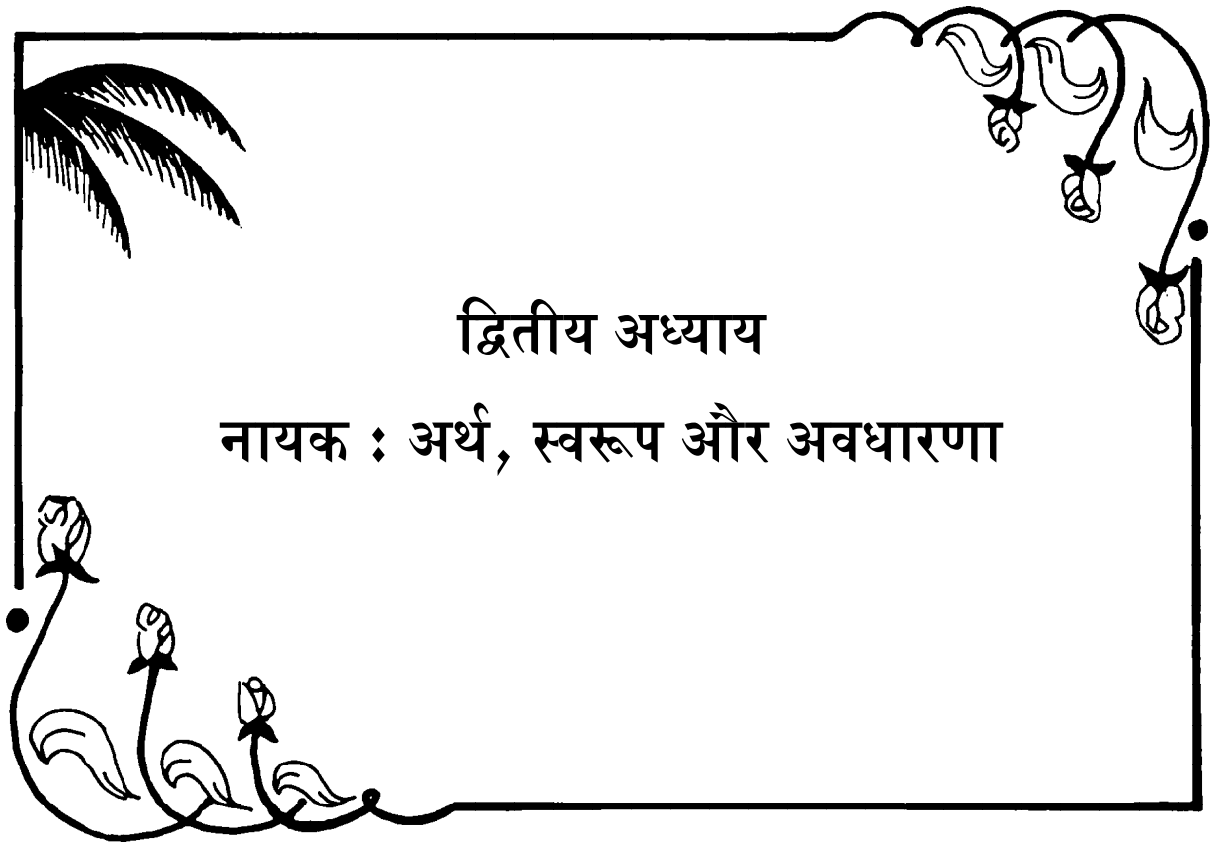

द्वितीय अध्याय

नायक : अर्थ, स्वरूप और अवधारणा

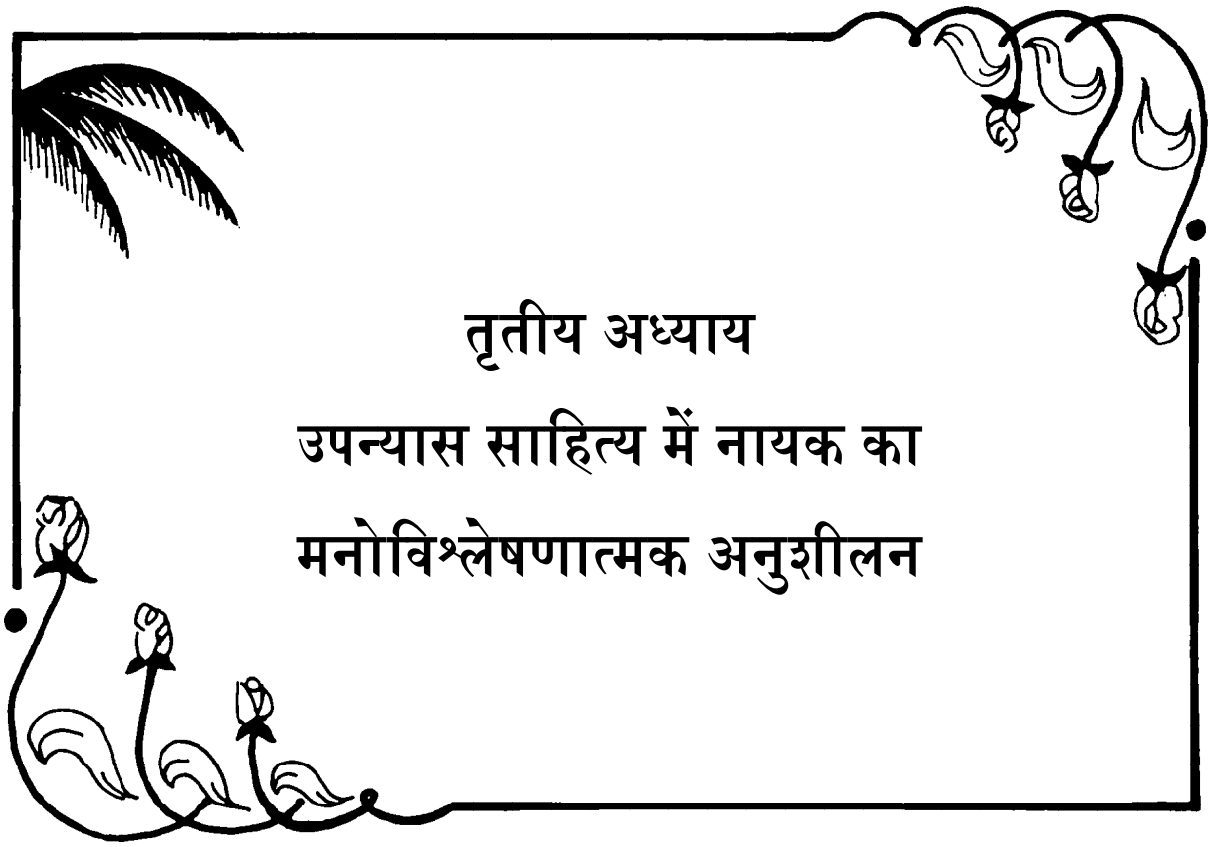

तृतीय अध्याय

उपन्यास साहित्य में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन

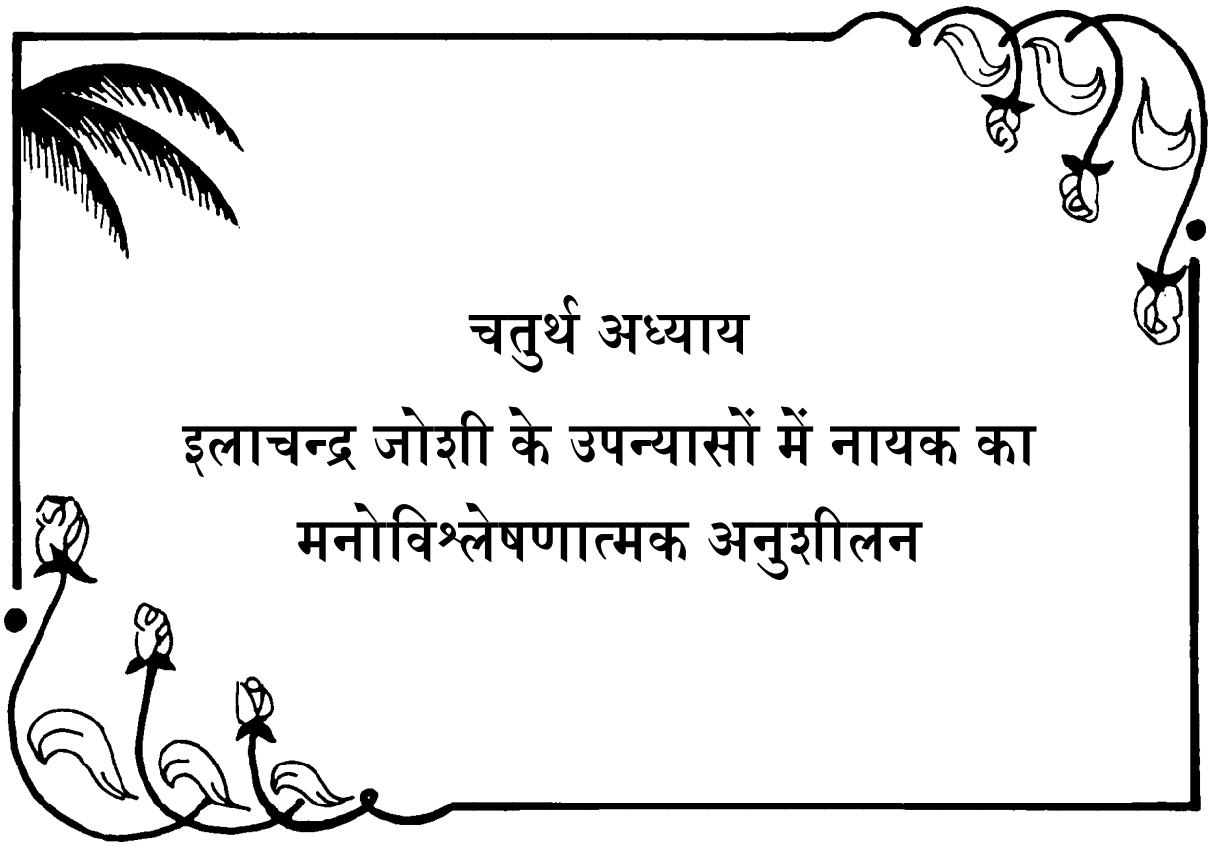

चतुर्थ अध्याय

इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन

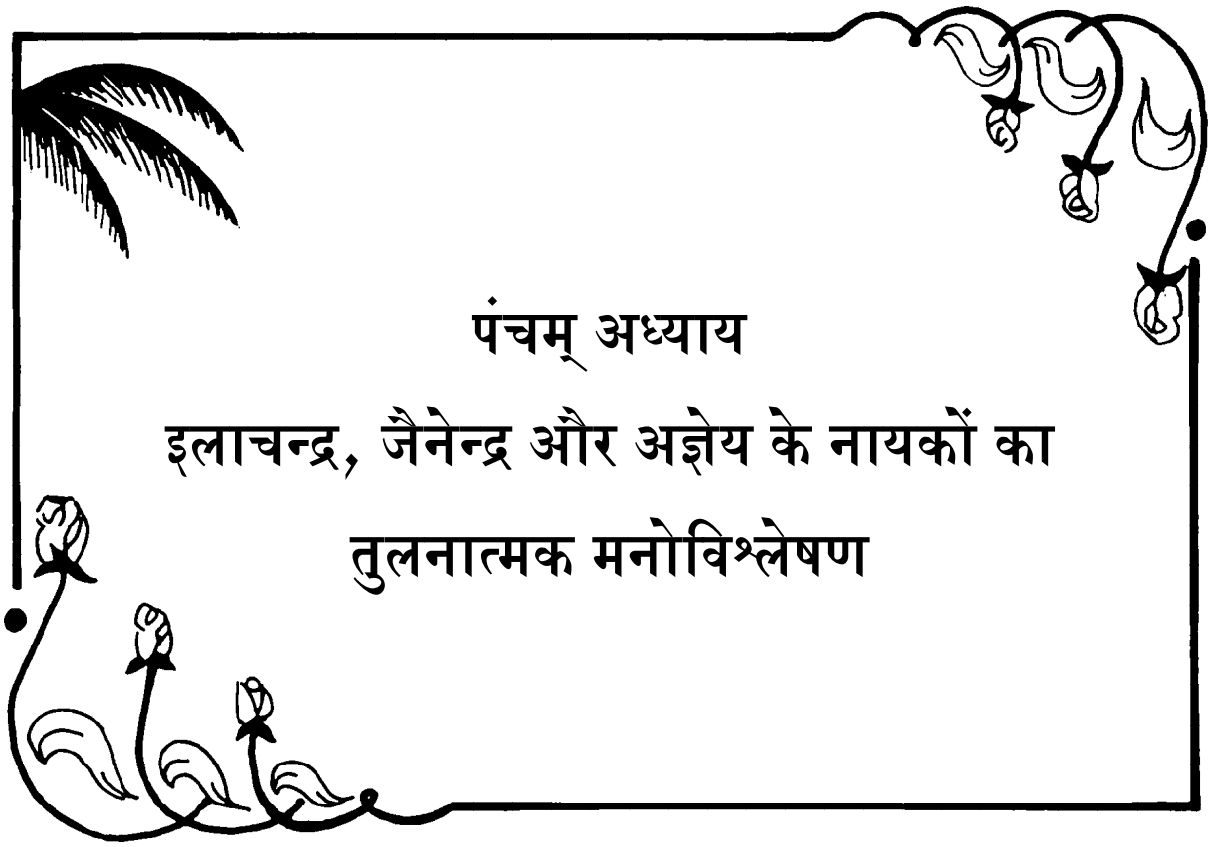

पंचम् अध्याय

इलाचन्द्र, जैनेन्द्र और अज्ञेय के नायकों का तुलनात्मक मनोविश्लेषण

षष्ठम् अध्याय

उपसंहार

ग्रंथानुक्रमणिका

आधारभूत ग्रंथ

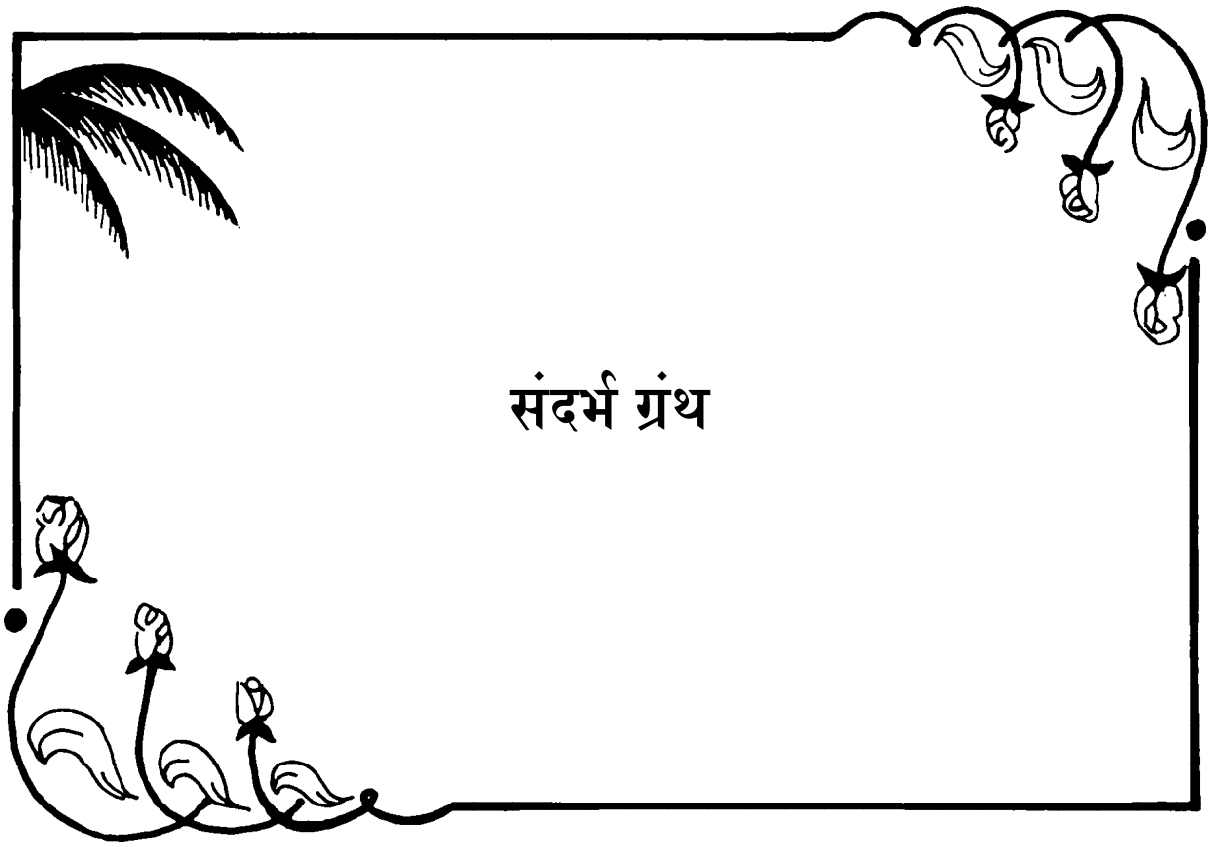

संदर्भ ग्रंथ

कोश – हिन्दी

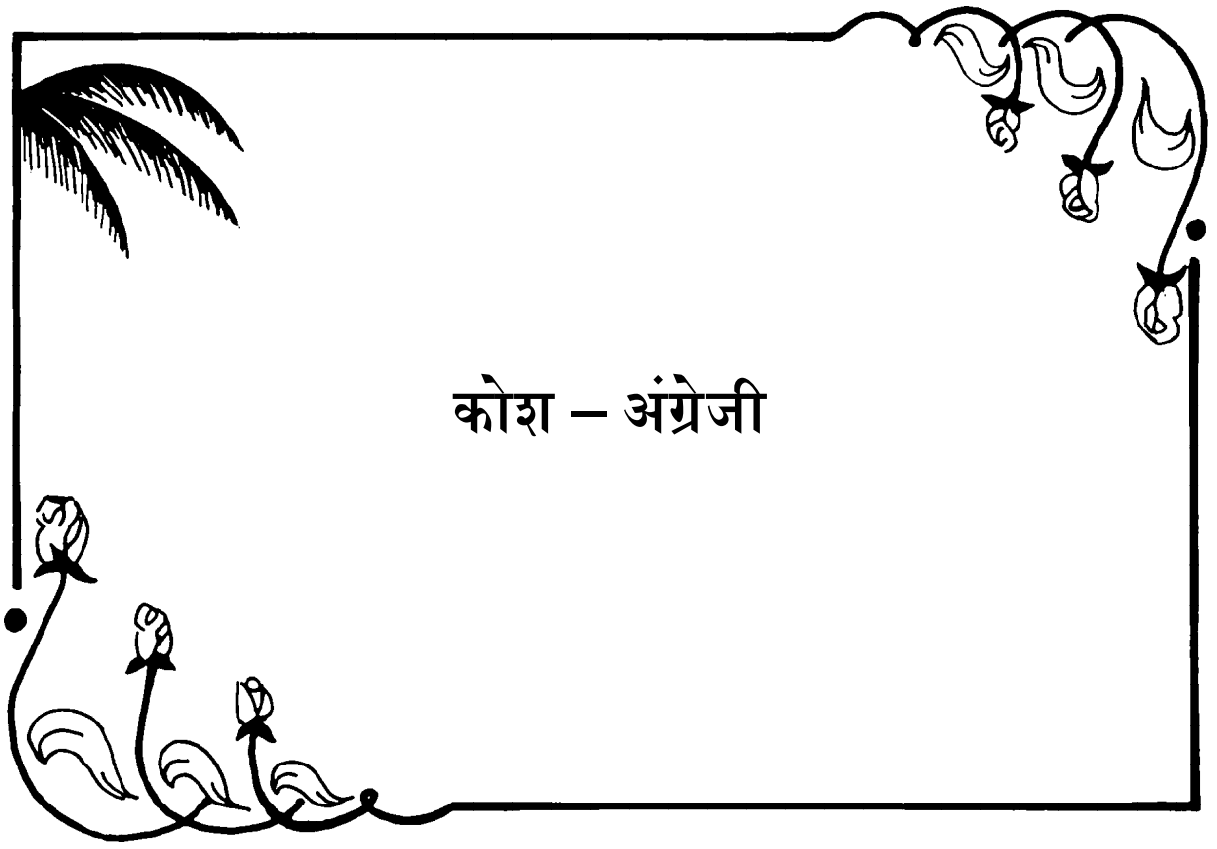

कोश – अंग्रेजी

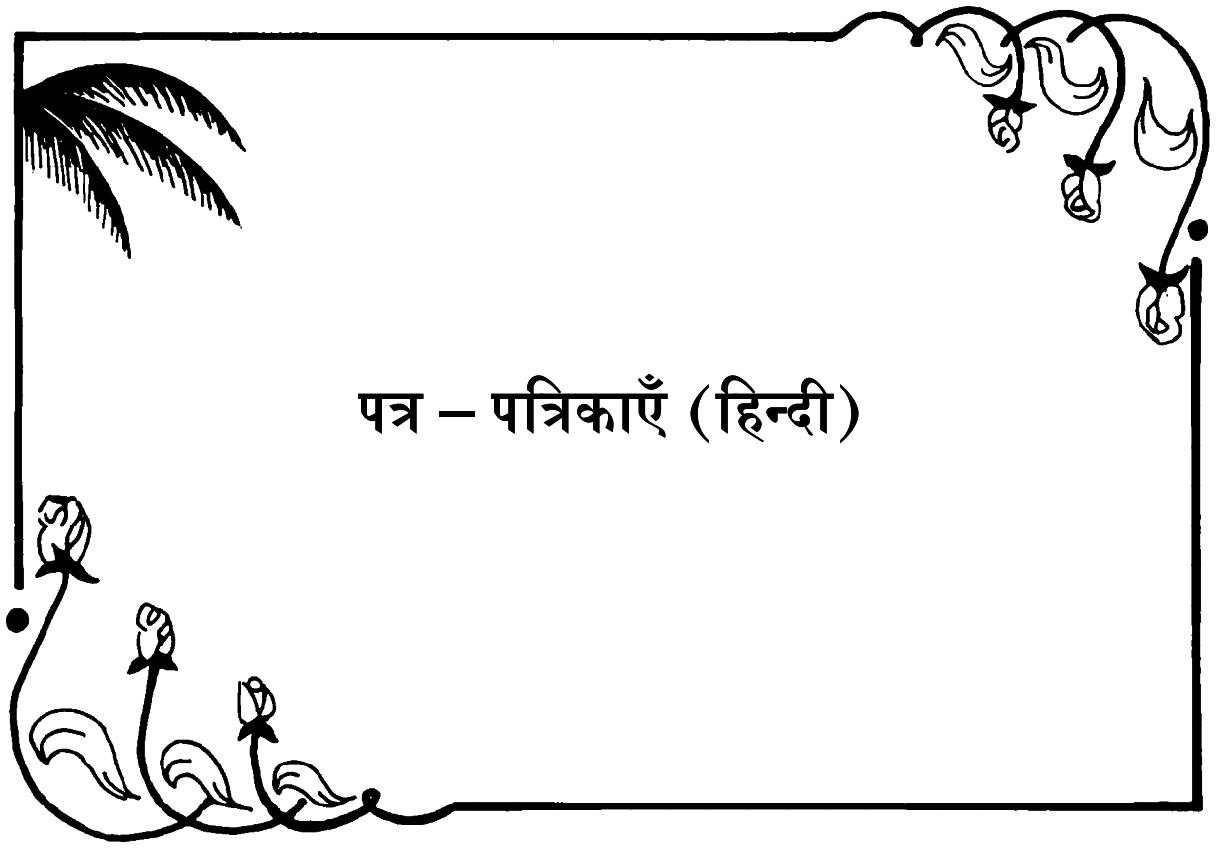

पत्र – पत्रिकाएँ (हिन्दी)

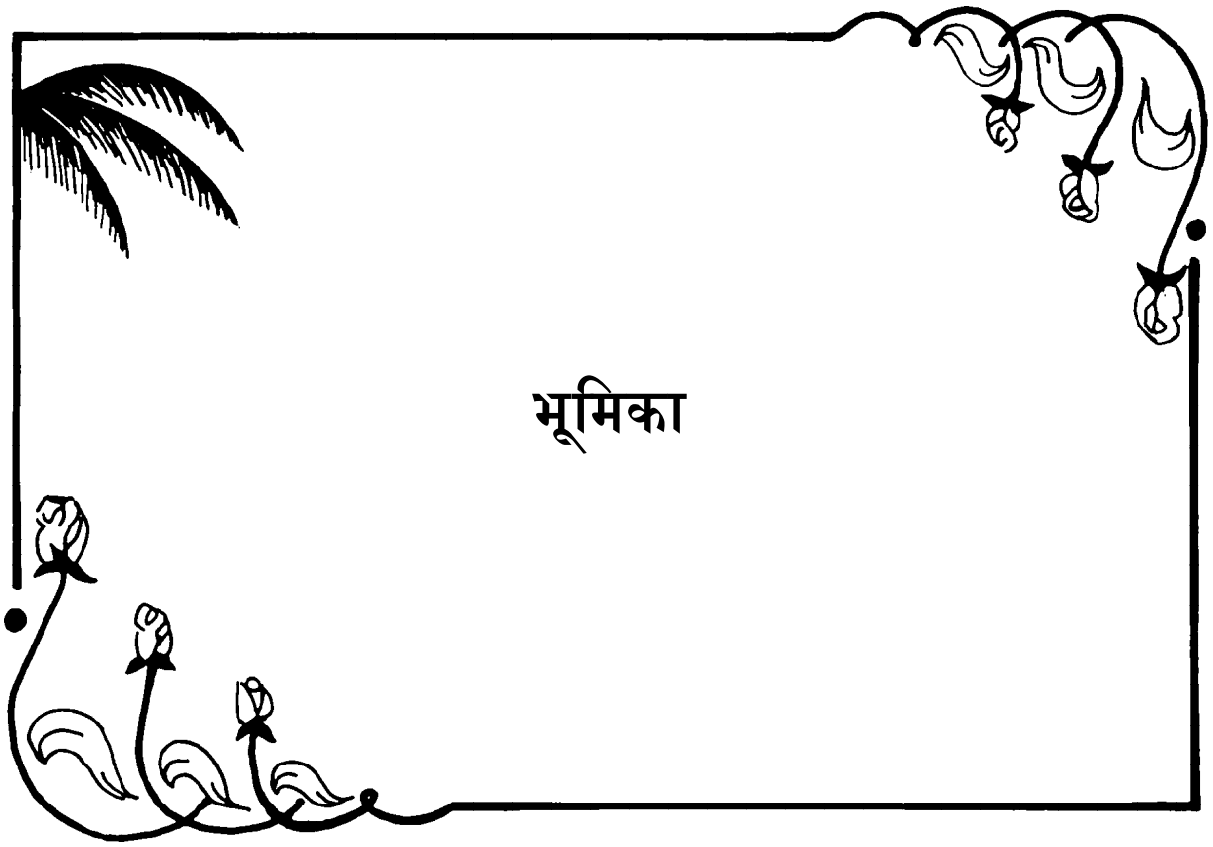

भूमिका

सहायक होते हैं । ऋत्विक, पुरोहित, तपस्वी और ब्रह्मवादी लोग धर्म सहायक होते हैं । काम सहायक विदूषक आदि होते हैं ।

नायक के कार्य की सिद्धि में कुछ सहायक पात्र होते हैं । विट्नायक नायक का सेवक एवं अत्यन्त भक्त होता है । वह नायक को प्रसन्न रखने के लिए नृत्य, गीत, एवं वाद्य का ज्ञाता होता है । साथ ही साथ वह धूर्त, वाचाल एवं वेशोपचार में निपुण होता है । जन साधारण इसे संभोग आदि विषयों में आसक्त समझते हैं । काञ्चुकी, वर्षावर, वामन, कुब्ज, चेट आदि नायक के अंत:पुर सहायक होते हैं । शकार, मूर्ख, अभिमानी एवं ऐश्वर्य युक्त होता है । कंचुकी राजा का सलाहकार व अन्त:पुर का रक्षक होता है। किसी को भेजने–बुलाने के भीतरी कामों में प्रतिहार, चेट–विट आदि नियुक्त किये जाते हैं । दूत किसी कार्य की सिद्धि के लिए संदेश लेकर जाते हैं । साहित्यदर्पणकार ने इसके तीन भेद बताये हैं । ''नि:सृष्टार्थ, मितार्थ और संदेहकारक । नि:स्पृष्टार्थ दूत भेजनेवाला तथा जिसके पास भेजा जाता है उसके अंतर्गत भावों को समझ लेता है और स्वयं ही उत्तर दे देता है । वह सम्यक् प्रकार के कार्य की सिद्धि करता है । मितार्थ अल्पभाषी होने के साथ–साथ कार्यो की सिद्धि भी कुशलता पूर्वक करता है । संदेशवाहक उतनी ही बात करता है, जितनी उससे कही जाती है ।''[४५]

(१५) विदूषक :–

हास्य के बिना व्यक्ति का जीवन निरर्थक है । हास्य मानव जीवन के विभिन्न दु:खों को नष्ट करता है । आजकल तो लोग हास्य क्लब भी चलाने लगें हैं,हास्य सेहत के लिए जरूरी और उपयोगी सिद्ध हुआ है । संपूर्ण दिन की थकान दूर करने के लिए इससे उत्तम और सरल कोई साधन नहीं हैं । नाटक आदि रूपकों में तो यह रस बहुत उपयोगी माना जाता हैं । यही कारण है कि भास, कालिदास एवं अन्य कवियोंने अपने ग्रंथो में हास्य रस को स्थान दिया है । इसी हास्य रस के पोषण के लिए 'विदूषक' का प्रयोग श्रेष्ठ कोटि के सुखान्तियों और दु:खान्यिों में हुआ हैं ।''[४६]

''नाट्यदर्पणकार के अनुसार विदूषक 'नायक' की शांति को कलह द्वारा और कलह को शांति द्वारा नष्ट करता है । राजा की वियोगावस्था में यह विनोददान से उसको प्रसन्न रखता है ।''[४७] कभी–कभी विदूषक नायक का मित्र भी हुआ करता है । विदूषक सहसा मंच पर आकर पहेली युक्त बात करता है ।

''भरत के अनुसार विदूषक 'द्विज' होता है । इसके द्विज होने का अभिप्राय यह है कि विदूषक शूद्र जाति का नहीं हो सकता । इसके अतिरिक्त वह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि में से किसी भी जाति का हो सकता है । परंतु एक स्थान पर उसे 'विप्र' कहा गया है ।''[४८] जिससे स्पष्ट प्रतीत होता है कि वह जाति का ब्राह्मण हुआ करता है । उसके दाँत बड़े और आँखें रक्त वर्ण की होती है । यह कुबड़ा और विकृत रुप वाला होता है । संक्षेप में इसके स्वरूप के विषय में इतना ही कहा जा सकता है कि इसकी आकृति ऐसी होनी चाहिए कि जो हास्य रस की सृष्टि कर सके ।

''भरत ने नाट्यशास्त्र में नायक के चार भेदों का उल्लेख किया है – 'धीरोदात्त, धीरललित, धीरोद्धत्त एवं धीरप्रशान्त । इन्हीं भेदों के आधार पर इन्होंने विदूषक को भी चार वर्गों में विभाजित किया है – लिंगी, द्विज, राजजीवी और शिष्य' जो क्रमशः दिव्य, नृप, अमात्य और ब्राह्मण नायक के विदूषक होते हैं ।''[४९]

नाट्यदर्पणकार का मत भरत के मत से अत्यंत साम्य रखता है । इनके मतानुसार विदूषक को चार वर्गों में विभाजित किया जा सकता है – लिंगी,द्विज, राजजीवी और शिष्य ।'' देवता का विदूषक लिंगी, ब्राह्मण का विदूषक शिष्य, राजा का विदूषक राजजीवी या द्विज का राजजीवी लिंगी होता है । इस प्रकार वणिक जाति आदि का भी विदूषक होता है ।

(१६) प्रतिनायक :–

''नाट़क के कार्यव्यापार में जो पात्र नायक का विरोध करता है, उसे प्रतिनायक कहते हैं । अपनी

धृष्ट प्रकृति के कारण इसे खलनायक की संज्ञा भी दी जाती है । प्रतिनायक स्वभाव से लोभी, धीरोद्धात्त, स्तब्ध (घमंडी), पापी, व्यसनी तथा नायक का शत्रु होता है ।''[५०] नाट्क या उपन्यास में नायक के बाद चरित्र–चित्रण एवं कार्य–व्यापार में संघर्ष और रोचकता की अभिवृद्धि एवं विकास की दृष्टि से इसका महत्व पूर्ण स्थान है । इसके बिना नायक का चारित्र्यिक विकास अच्छी तरह से नहीं हो पाता है, क्योंकि मानव के स्वभाव का (व्यक्तित्व का) सही अनुमान विरोधजनक एवं विपरीत परिस्थिति में ही सम्भव है और नाट्क में ऐसी परिस्थितियों के निर्माण में प्रतिनायक का विशेष योगदान रहता है ।

इसके अतिरिक्त डॉ. प्रतिभा कोटकने ''प्रेमचंद के उपन्यासों में नायक की परिकल्पना'' में नायक का वर्गीकरण एवं भेदोपभेद बतानेवाला चार्ट प्रस्तुत किया है ।

नायक का वर्गीकरण–भेदोपभेद

वर्ग–१ :

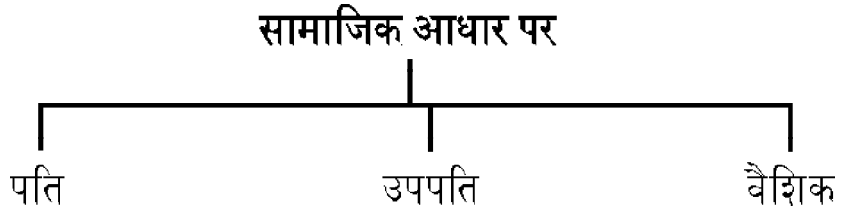

वर्ग–२ :

काम प्रवृतियाँ व्यवहार के आधार पर

(१) अनुकूल

(२) दक्षिण

(३) शठ

(४) धृष्ट

वर्ग–३ :

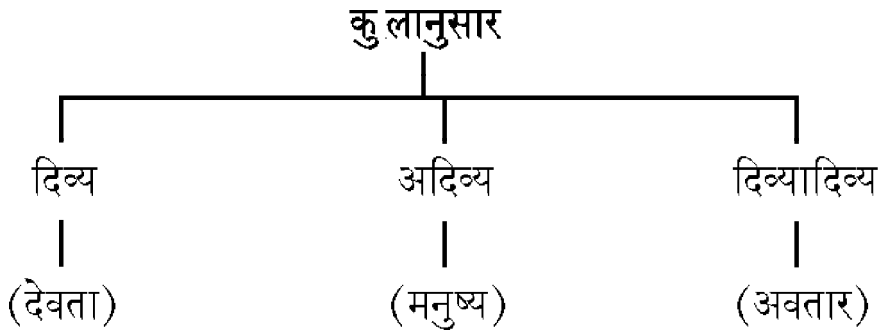

वर्ग–४ :

शील के अनुसार

(१) धीरोदात्त

(२) धीरललित

(३) धीरप्रशान्त

(४) धीरोद्धत्त

वर्ग–५ :

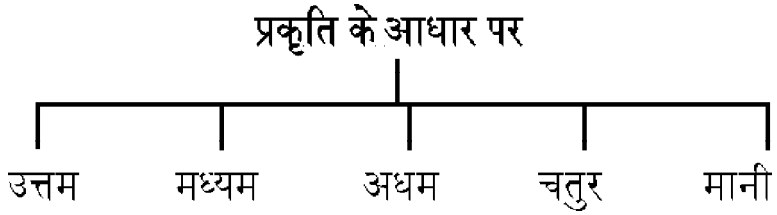

उपर्युक्त आलेख के नायकों का संक्षिप्त परिचय क्रमशः देखना होगा ।

(१५) वर्ग – १ : सामाजिक आधार पर :–

(१) पति :– जो नायक नायिका का विधिवत पाणिग्रहण करता है उसे पति कहते हैं । यह नायक अपनी पत्नी (स्वकीया) में ही अनुरक्त रहता हैं ।

(२) उपपति :– अन्य स्त्री (परकीया) में अनुरक्त रहनेवाला नायक उपपति कहा जाता है । इस प्रकार का नायक पति धर्म को नष्ट करता है । वह स्त्री के आचार का धर्मानुष्ठान को नष्ट करने में कारणभूत होता है।

(३) वैशिक :– वेश्या (सामान्या) में आसक्त नायक को वैशिक कहते हैं । वह वेश्या के उपभोग में अत्यन्त रसिक होने से भी उसे वैशिक कहा जाता है ।

(१६) वर्ग – २ : कामप्रवृति या व्यवहार के आधार पर :–

(१) अनुकूल :– जो पुरुष अन्य स्त्रियों से सदा विमुख रहकर केवल अपनी स्त्री यानी पत्नी से प्रेम करे, उसे अनुकूल नायक कहते हैं ।

(२) दक्षिण :– सभी नायिकाओं में समान रुप से अनुराग प्रदर्शित करनेवाले नायक को दक्षिण कहते हैं। यह अनेक नायिकाओं को एक समान प्रेम करता हैं ।

(३) शठ :– स्वयं अपराधी होने पर भी नायिका को ठगनेवाला नायक शठ होता हैं । यह ज्येष्ठा (स्व पत्नी) का लिपछिपकर अहित करनेवाला एवं नवीन नायिका से प्रेमाचार करनेवाला हैं ।

(४) धृष्ट :– यह कपट़ी एवं निर्लज्ज होता है और स्वयं अपराधी होकर भी नायिका को ठगता है । यह ज्येष्ठा नायिका की उपस्थिति में उसकी जानकारी में ही अपनी मनमानी नवीन प्रेयसी से मिलन कार्य करता है, और रतिक्रीड़ा में चिह्नों से युक्त होने पर भी लज्जित नहीं होता ।

(१७) वर्ग – ३ : कुल के आधार पर :–

(१) दिव्य :– यह नायक देवता–देवकुल में उत्पन्न हुआ होता है।

(२) अदिव्य :– मनुष्य रूप में होता है ।

(३) दिव्यादिव्य :– मूल देवरूप होने पर भी मनुष्य रुप में अवतार लेता है । रामचन्द्र–कृष्ण इसी प्रकार के नायक हैं ।

(१८) वर्ग – ४ : शील के अनुसार :–

(१) धीरोदात्त :– यह अतिगंभीर, क्रोध, शोक, दु:ख में प्रकृतिस्थ क्षमाशील, अचंचल(स्थिर बुद्धि) दृढवती निरभिमानी एवं महाप्राण नायक होता है ।

(२) धीरोदात्त :– यह नायक घमंडी, ईर्षालु, कपटी, मायावी, चंचल, क्रोधी, ओर आत्मश्लाघी यानी अपनी प्रशंसा स्वयं करनेवाला हैं ।

(३) धीरप्रशान्त :– जिस व्यक्ति में सामान्य रूप से सज्जन पुरुष के सभी गुण विद्यमान हो । वह गौरवशाली, गुणगरिमा संपन्न नायक, धीर प्रशान्त कहा जाता है । वह ब्राह्मण, वैश्य या मंत्री पुत्र होता है।

(४) धीरललित :– जो व्यक्ति निश्चिंत,कोमल स्वभाव वाला, सुशील तथा कलाओं में अनुराग रखता है, उसे धीरललित नायक कहते हैं । वह विलासी, कलाप्रिय तथा भोगरसिक होता है ।

(१९) वर्ग – ५ : प्रकृति के अनुसार :–

(१) उत्तम :– इस प्रकार का नायक मधुर, त्यागी, विरागी तथा नायिका के अपमान को सहन करनेवाला होता है ।

(२) मध्यम :– इस प्रकार का नायक, नायिका के अल्प रोष को देखकर भी विरक्त होनेवाला तथा समय पर दान देनेवाला होता है ।

(३) अधम :– यह नायक मित्रों के मना करने पर भी नायिका या अन्य नारी से तिरस्कृत होकर भी उसके प्रेम में आकुल–व्याकुल रहनेवाला होता हैं ।

(४) चतुर :– यह नायक प्रेमकला में व्यावहारिक कुशलता बतानेवाला होता हैं ।

(५) मानी :– यह नायक प्रेमी तो होता है, परंतु स्वमान का ख्याल रखकर प्रेम में व्यवहार करता हैं ।

मानिनी नायिका के लक्षण इस प्रकार के नायक में होते हैं । जिस तरह मानिनी नायिका अपने प्रियतम से मान करती है, उसी प्रकार यह मानी नायक अपनी नायिका से मान करता हैं।''[५२]

अत: नायक स्वमानी, फ़लको प्राप्त करनेवाला, उच्चकुलोत्पन्न, नायिका के प्रति पूर्णत: समर्पित होना चाहिए। तमी उत्तम नायक हो सकता है। नायक वाणी, स्वभाव और स्वरूप से भी अच्छा लगना चाहिए।

समाज व्यक्तियों की संयुक्त इकाई है। हजारों वर्षों से सामूहिक जन–इकाई का कोई न कोई नेतृत्व करता रहा है, जिसे आदित्याचार्यों ने ''नायक'' के नाम के सम्बोधित किया है। समाज की स्थिति गत्यात्मक होने से नायक के अर्थ व गुणों में भी परिवर्तन की स्थिति बरकरार रही हैं। जिस युग में समाज के सामने जो प्रश्न और समस्याएँ उसके गात्रों को कुरेदती रहीं, उस काल के जागरुक कवि को तद्नुसार नायक की स्थापना करनी पडी है।

संस्कृत के आचार्यो ने 'नायक' की कल्पना राजशाही समान्तशाही युग की परस्थितियों में उन्हें ही सिरमौर मान करके जो विधान किए, वे मात्र काव्य या नाटक तक सीमित रहें, समाज के सभी वर्गों को साथ में लेकर चलना तथा उन्हें भी प्रतिनिधित्व देने की भावना के परिणाम स्वरुप रूपकों के अन्य प्रकारों जैसे प्रकरण, प्रहसन, भाण इत्यादि का प्रादुर्भाव हुआ । वैसा ही हिन्दी साहित्य जगत की उपन्यास विधा में हुआ है। सामाजिक मूल्यों व रूढिगत मान्यताओं से जीवन चरमराने लगा, उत्पीडन व मनोव्यथाओं से ऊब्रा हुआ आदमी नई रोशनी तलाशने लगा। परिणामत: 'नायक' के स्थापित लक्षण सर्वत्र एक नहीं रहे।

समय बदला उसके साथ–साथ संदर्भ बदलते गये और नायक एक वर्ग, समाज या जाति का प्रतिनिधि न रहकर बदलते समय की आवश्यकतानुसार उसका स्वरूप भी, उसी क्रम में बदलते गये। कभी नायक समाज के लिए लडता था अब वह स्वयं से लडता दिखने लगा। यहीं प्रस्तुत अध्याय में दिखाने का मैनें नम्र प्रयास किया गया है। ***

–: संदर्भ सूचि :–

(१) SEAN O'FACIN - THE VANISHING HERO पृ. १६

(उद्धृत – अद्यतन हिन्दी उपन्यास– बिन्दु भट्ट – पृ. ३०)

(२) प्रेमचंद के उपन्यासो में नायक की परिकल्पना डॉ. (श्रीमती) प्रतिभा कोटक पृ. १६

(३) हिन्दी नाट़क में नायक का स्वरूप

– डॉ. राजेन्द्र कृष्ण भनोत पृ. ७

(४) भारतीय साहित्य शास्त्र कोश, डॉ. राजवंशसहाय हीरा पृ. ६

(५) नालंदा विशाल शब्द सागर, पृ. ६९२

(६) बृहद हिन्दी शब्द कोश, संपादक, कालिकाप्रसाद पृ. ६९०

(७) व्यावहारिक पर्यायवाची शब्द कोश, पृ. ९९

(८) राजपाल हिन्दी शब्द कोश, हरदेव बाहरी – पृ. ४३७

(९) मानविकी पारिभाषिक कोश, साहित्य खंड, संपादक : डॉ. नरेन्द्र पृ. १३५

(१०) मानक हिन्दी कोश (तीसरा खंड),संपादक : रामचन्द्र वम्मा पृ. २४८

(११) विशाल शब्द सागर – संपादक श्री नवलजी पृ. ६९३

(१२) भे दैश्चतुर्धा ललितशान्तोदात्तोद्धतैरयम्। दशरुपकम् २.३, पृ. ११३

(१३) महासत्त्वोऽतिगम्भीरः क्षमावानविरुत्थनः।

स्थिरो निगूढाहंकारो धीरोदात्तो दृढव्रतः॥ दशरुपकम् २.५, पृ. ११४

(१४) दर्पमात्सर्यभूमिष्ठो मायाछद्मपरायणः।

धीरोद्धतस्त्वहंकारी चलश्चष्डोः चिकत्थनः ॥ वहीं, २.५, पृ. ११७

(१५) निश्चिन्तो धीरललितः कलासक्तः सुखी मृदुः॥ वहीं, २.३, पृ. ११३

(१६) सामान्यगुणयुक्तस्तु धीरशान्तो द्विजादिकः ॥ वही, पृ. ११३

(१७) दशरुपकम्, २.६, पृ. ११८

(१८) HERO IS A Purely Social Creatior Sean o'Faocain –पृ. १६

(उद्रत – अद्यतन हिन्दी उपन्यास – बिन्दु भट्ट. पृ–१३)

(१९) अध्यन हिन्दी उपन्यास – बिन्दु भट्ट – पृ. ३०

(२०) Buddhadave boss – Modrenity and Contempro a Indian titerufure – पृ. ४१०/४११

(उद्धत – अद्यतन हिन्दी उपन्यास – बिन्दु भट्ट, पृ. १३)

(२१) Compect Oxford Reference Dictionary

Editor : Catherene Soanes

Page : 8

Oxford University Press, 2004

Actor – A Person whose Profession is Actong.

(२२) Oxford English–Hindi Dictionary

Editors : S. K. Verme, R. N. Sahai

Page : 12

Oxford Universiry Press, 2004

Actor : (रंगमंच, फ़िल्म आदि में) अभिनेता; पात्र ।

(२३) The New Penguin English Dictionary

Editor : Robert Allen

Page : 13

Penguin : Books LTD, 2000

Actor : A Man or a Woman who Peresents a Character in a dramatic production; ESP one whose Profession is Acting.

(२४) हिन्दी नाट़क मे नायक का स्वरूप – डॉ. राजेन्द्र कृष्ण भनोत पृ. १०८

(२५) वही – पृ. ११

(२६) काव्य के रूप – गुलाबराय पृ. १६

(२७) दशरूपकम, द्वितीय प्रकाशन पृ. १/२

(२८) हिन्दी नाट़क में नायक का स्वरूप – डॉ. राजेन्द्र कृष्ण – पृ. १७

(२९) शेठ गोविन्ददास अमिनंदनग्रंथ – संपादक, डॉ. नगेन्द्र – पृ. १६५

(३०) संस्कृत नाट़क – डॉ. कीथ पृ. ३८१

(३१) प्रेमचंद के उपन्यासों में नायक की परिकल्पना – डॉ (श्रीमती) प्रतिभा कोट़क – पृ. १४

(३२) सामाजिक हिन्दी नाट़को में चरित्र–सृष्टि – जयदेव तनुजा – पृ. १२

(३३) यहीं – पृ. २७

(३४) यहीं – पृ. २७

(३५) वहीं – पृ. १७४

(३६) दशरुपकम् – धनंजय ज्यारलकार : हजारी प्रसाद द्विवेदी २.७, पृ. १२०

(३७) वहीं २.७, पृ. ११९

(३८) वहीं २.७, पृ. ११९

(३९) वहीं २.७, पृ. १२०

(४०) सामाजिक हिन्दी नाटको में चरित्र–सृष्टि – जयदेव तनुजा पृ. १७५

(४१) संस्कृत नाट्य शास्त्र – डॉ. रमाकान्त त्रिपाठ़ी – पृ. ८०

(४२) वहीं – पृ. ८७

(४३) वहीं – पृ. ८१

(४४) नाट्यदर्पण – पृ. १७५

(४५) संस्कृत नाट्य शास्त्र – डॉ. रमाकान्त त्रिपाठ़ी – पृ. ८२

(४६) नाट्यदर्पण – पृ. १७७

(४७) नाट्यदर्पण – पृ.१७८

(४८) नाट्यशास्त्र – ३५ अध्याय – पृ. ७७

(४९) नाट्यशास्त्र चतुर्थ अध्याय – पृ. १९/२०

(५०) हिन्दी नाट़क में नायक का स्वरूप – डॉ. राजेन्द्र भनोत – पृ. ४७

(५१) प्रेमचंद के उपन्यासों में नायक की परिकल्पना – डॉ. (श्रीमती) प्रतिभा कोट़क

– पृ. २३/२४/२५

***

तृतीय अध्याय

उपन्यास साहित्य में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन

(१) पूर्व प्रेमचंद युग :

– मनोरंजन प्रधान उपन्यासों के नायक

– तिलस्मी और ऐयारी उपन्यासों के नायक

– जासूसी उपन्यासों के नायक

– सामाजिक उपन्यासों के नायक

– ऐतिहासिक उपन्यासों के नायक

(२) प्रेमचंद युग :

– प्रेमचंद के उपन्यासों के नायक

– प्रसाद के उपन्यासों के नायक

– वृंदावनलाल वर्मा के उपन्यासों के नायक

– भगवतीप्रसाद बाजपेयी के उपन्यासों के नायक

– भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों के नायक

(३) प्रेमचंदोत्तर युग :

(१) यशपाल के उपन्यासों के नायक

(२) हजारीप्रसाद द्विवेदी के उपन्यासों के नायक

(३) उपेन्द्रनाथ अश्क के उपन्यासों के नायक

(४) संदर्भ ग्रंथ सूची :

***

तृतीय अध्याय

साहित्य की सभी विधाओं में नायक का महत्त्वपूर्ण स्थान है। बिना नायक के कोई कृति नही हो सकती। ज्यादातर गद्य पद्य रचनाओं का माध्यम नायक ही है । उपन्यास और नाटक में नायक के आलेखन के प्रारंभिक काल में और आज के दौर के नायक में कहीं न कहीं अलगपन दिखता है। नायक का चित्रण चाहे मैं शैली में हो या 'परोक्ष शैली' में। प्रारंभ में हिन्दी के उपन्यासकारों के सम्मुख कोइ साहित्यिक लक्ष्य न होने के कारण वे नीति, शिक्षा और मनोरंजन की साधना में रमे रहे। इन लक्ष्यों की पूर्ति के लिए वे काल्पनिक विषयों में इतने तल्लीन हो गये कि मानव जीवन की समस्याओं और प्रश्नों की ओर उनका ध्यान ही नहीं गया । इसी वजह से तत्कालीन उपन्यास रचना के विषय में लक्ष्य की दृष्टि से विविधता का अभाव रहा है।

(१) पूर्व प्रेमचंद युग :

इस काल के दौरान रचे गये उपन्यासकारों का उद्देश्य पाठकों का मनोरंजन था। अध्ययन की सुविधा हेतु पूर्व प्रेमचंद युग के उपन्यास साहित्य में निरूपित नायक के स्वरूप और स्थिति विश्लेषण के हेतु इन्हें दो विभागों में विभक्त करेंगे ।

(१) मनोरंजन प्रधान उपन्यास के नायक :

(तिलस्मी, ऐयारी एवं जासूसी उपन्यासों के नायक) और

(२) सामाजिक उपन्यासों के नायक :

(सुधारवादी, उपदेशप्रधान, ऐतिहासिक उपन्यासों के नायक)

(१) मनोरंजन प्रधान उपन्यासों के नायक :

(तिलस्मी, ऐयारी एवं जासूसी उपन्यासों के नायक)

इस काल में कथा की रोचकता बढाने के उद्देश्य से लेखकों ने संभाव्यता और स्वाभाविकता की ओर ध्यान दिये बिना ही अपनी लेखनी चलाई। मनोरंजन मनुष्य की पहली जरुरत है। अगर कोई मनुष्य किसी भी उलझन या द्विधा में है तो मनोरंजन का सहारा लेकर वह अपने को हलका फुल्का करता है, या अपने गम को भूल जाता है। चाहे वह पाठक बनकर मनोरंजन का मजा ले, चाहे दर्शक बनकर या फिर चाहे श्रेष्ठ श्रोता बनकर। समय के अनुसार साहित्यकार को साहित्य की रचना करती पडती है। फिर मनोरंजन तो तत्कालीन समय की मांग और जरुरत थी। ऐसे उपन्यासों के नायकों का अनुशीलन अपेक्षित हैं।

(१) तिलस्मी और ऐयारी उपन्यासों के नायक :

इस काल में कल्पना प्रधान उपन्यास लिखे गये, जिनका प्रमुख उद्देश्य पाठकों का मनोरंजन था। इन उपन्यासों में नाटकीयता और कौतूहल पूर्व घटनाओं की भरमार है, जिसके कारण उपन्यास के अंत तक पाठकों का कुतूहल बना रहता है। इन कल्पना प्रधान उपन्यासों के अंतर्गत तिलस्मी और जासूसी उपन्यास आते हैं। तिलस्मी उपन्यास के लेखक मनोरंजन के साथ–साथ कहीं–कहीं उपदेश देने की ओर भी झुके हैं। उदाहरण के लिए– 'चंद्रकान्ता' उपन्यास की भूमिका में देवकीनंदन खत्री ने उपन्यास के लक्ष्य की ओर संकेत करते हुए कहा है–'' सबसे ज्यादा फायदा तो यह है कि ऐसी किताबों को पढनेवाला जल्दी से धोखे में न पडेगा।''[१] ऐयारों की चालाकी, तिलस्मने आश्चर्य और नाटकीय घटनाओं की इन में ऐसी रेल–पेल भर दी है कि पाठक उनके नायक को पढ़कर आदि से अंत तक कल्पना लोक में विचरता रहता है। आचार्य रामचंद्र शुक्ला ने इस अनगढता की ओर संकेत करते हुए कहा है कि– ''इन उपन्यासों का लक्ष्य केवल घटना वैचित्र्य रहा, रस–संसार भावविभूति या चरित्र–चित्रण नहीं, ये वास्तव में घटना प्रधान कथानक या किस्से हैं, जिनमें जीवन के विविध पक्षों के चित्रण का कोई प्रयत्न नहीं है।[२]

तिलस्मी और ऐयारी उपन्यासों में नायक का चित्रण उपन्यासकारों ने तत्कालीन वातावरण, समय और लोगों की मानसिक स्थिति को ध्यान में रखकर किया है। ऐसे उपन्यासों को आलोचकों ने मनोरंजन

प्रधान उपन्यास कहा है । इस प्रकार के उपन्यासाकारों में देवकीनंदन खत्री ने 'चंद्रकान्ता' (४ भाग), 'चन्द्रकान्ता संतति– (२४ भाग) 'भूतनाथ' (२१ भाग) तथा किशोरीलाल गोस्वामी के 'राजकुमारी'– औरे 'कटे मुंडे की दो–दो बातें', 'तिलस्मी शीशमहल', हरे कृषण जौहर के– 'कुसुमलता' (४ भाग) 'भयानक ब्रह्मचारी पिशाच', 'तिलस्म निलम' तथा जादूगर निहालचन्द्र शर्मा ने– 'मोती महल या 'लक्ष्मी देव' तथा 'जासूसी महल' वा 'रुपमती', विनायक लाल दादू का– 'चन्द्रभागा', कुँवरनारायण गुप्त का 'धूर्त ऐयार,' शंकर दयाल श्रीवास्तव का 'मदन मंजरी' (६ भाग), गुलाबदास का 'तिलस्म बुर्ज' आदि हैं। तिलस्मी उपन्यास के नायक का परिचय स्वयं उपन्यासकार देते है । 'चन्द्रकान्ता सन्तति' में नकाबपोश भूतनाथ का परिचय स्वयं लेखक ने इस प्रकार दिया है– ''यह नकाबपोश असल में भूतनाथ था, जो सूर्यास्त के कहे मुताबिक शेरअलिखाँ के पास आया था। उसे विश्वास था कि शेरअलिखाँ कल्याणसिंह की मदद के लिए तैयार हो जाएगा... मगर भूतनाथने इतना बडा हौंसला दिया और बेईमानी के हाथ से शेरअलिखाँ को बचा दिया।[३] जासूसी और तिलस्मी उपन्यास के नायक किसी भी प्रकार से नायिका को प्राप्त करने में रत रहता है। तिलस्मी उपन्यास के नायक की हर चाल, हर स्थिति से हमें आश्चर्य या शंका–कुशंकाएँ होती है। इन नायकों के चरित्र पढकर ये हमें उपदेशक भी लगते हैं। दूरदर्शन पर धारावाहिक के रूप में 'चन्द्रकान्ता' को देखकर ज्यादातर दर्शक चकित रह जाते थे। तिलस्मी और ऐयारी उपन्यास ज्यादातर नायिका केन्द्रित है। फिर भी अतिमानवीय शक्ति और अतिरसिकता के तत्व के रुप में नायिका के चरित्र में हमें कोई त्रुटि नहीं दिखती है।

(२) जासूसी उपन्यासों के नायक :

हिन्दी में जासूसी उपन्यास किशोरीलाल गोस्वामी और गोपालराम गहमरी के द्वारा विकसित हुए। आलोंचको ने जासूसी उपन्यासों को अपराध प्रधान कथा भी कहा है। जासूसी उपन्यास के नायक डाकू, हत्यारा और पुलिस के हथकंडो के शिकार लगते हैं। इन नायकों का परिचय स्वयं उपन्यासकार देते हैं।

'नूतन ब्रह्मचारी' में डाकुओं का परिचय देते हुए लेखक पाठकों से कहता है– 'पाठक अब इन तीन मेहमानों का परिचय आप को दिलाते है। ये तीनों वे ही डाकू थे, जिनका पेडों के नीचे रात–भर निवास करना हम उपर लिख आये हैं। [४] जासूसी उपन्यासकारों में गोपालराम गहमरी का नाम बडे आदर के साथ लिया जाता है । आपके उपन्यास हैं– 'रहस्य विप्लव', 'जासूस की बुद्धि', 'भयंकर भेद', 'हंसादेवी', 'गुमनाम चिठ्ठी', 'गाडी में खून', 'लडकी की चोरी', 'जमना का खून–, 'जासूस पर जासूस', 'किले में खून', 'चक्करदास चोरी', 'गुप्त भेद'। इस दौर में बालकृष्ण भट्ट और हरिकृष्ण जौहर ने भी जासूसी उपन्यास लिखें । जौहरजी के उपन्यास हैं– 'छाती का छूरा', 'भयानक खून', 'जवाहरात की पेटी', 'भूतों का डेरा'। दुर्गाप्रसाद खत्री के 'लाल पंजा', 'प्रतिशोध', रक्त मंडल, 'सफेद शैतान' आदि उपन्यास है ।

इस प्रकार जासूसी उपन्यास के नायक को अच्छे जासूस के रुप में देखा जा सकता हैं। जासूसी उपन्यास का नायक साहसी, रोमांचक और तीव्र बुद्धिवाला होता है, अतः वह अपराधी को पकडने में या पुलिस को चकमा देकर भागने में सफल होता है।

तिलस्मी, ऐयारी और जासूसी उपन्यासों के नायक अंशतः मानसिकता के शिकार हैं। वे हंमेशा अपनी ही धून में ही रहते हैं।

(२) सामाजिक उपन्यासों के नायक :

(सुधारवादी, उपदेश प्रधान उपन्यास)

इस दौर के आरंभिक उपन्यासों में मौलिकतापूर्ण तथा संसारी वार्ता को कथावस्तु का विषय बनाया है। ऐसे उपन्यासकारों में लाला श्रीनिवासदास का 'परीक्षा गुरु', पंडित बालकृष्ण भट्ट के 'सौ अजान और एक सुजान', 'नूतन ब्रह्मचारी'। पंडित श्री श्रद्धा राम फुल्लोरी कृत– 'भाग्यवती, पंडित गौरीदत्त का

'देरानी–जेठानी की कहानी', भारतेन्दु हरिशचन्द्र का 'पूर्वप्रकाश' और 'चन्द्रप्रभा', लज्जाराम शर्मा के 'स्वतंत्र रमा', 'परतंत्र लक्ष्मी', 'धूर्त रसिकलाल', 'आदर्श दम्पति', 'हिन्दू गृहस्थ', 'बिगडे का सुधार'। किशोरीलाल गोस्वामी के– 'त्रिवेणी', स्वर्गीय कुसुम या 'कुसुम कुमारी', 'प्रणयिनी परिचय' गोपालराम गहमरी के 'सात पूतोहूँ', 'बडा भाई', 'देरानी–जेठानी', 'दो बहने', चन्द्रशेखर पाठक का 'वारांगना रहस्य' (छ:भाग), इन सभी उपन्यासों में नायक का चित्रण आम आदमी की तरह ही हुआ है। जिस प्रकार आम–आदमी दुर्बल मन का होता है जो किसी के हित–अहित के बारे में सोचना जरूरी नहीं समझता। कभी–कभी इस काल के उपन्यासों के नायक किसी वर्ग विशेष के प्रतीक बनकर रह गये न हों ऐसा लगता है। सामाजिक उपन्यासों के नायक सामान्यत: बालविवाह, वृद्धविवाह, दहेज प्रथा, पारिवारिक समस्या, सामाजिक कुरिवाज, जातिप्रथा, वर्ण व्यवस्था, अंधश्रद्धा आदि का विरोध करके सामाजिक व्यक्ति के रूप में चित्रित मिलतें है। इन उपन्यासों के नायकों में रीतिकालीन प्रेम का छिछोलापन मिलता है। ये नायक उपन्यासकार को कठपुतली के समान नाचते हैं। कहीं भी नायक स्वतंत्र रूप से उभरकर सामने नहीं आता । स्वयं उपन्यासकार ही उनका बाहरी और औपन्यासिक वर्णन कर देता हैं। एक दूसरी बात इन नायकों में दृष्टिगोचर होती है कि ये नायक ('सौ अजान और एक सुजान', 'परीक्षागुरु', 'नि:सहाय हिन्दू', 'धूर्त रसिकलाल' आदि) या तो अपने मित्र की सहायता से सफलता प्राप्त करते हैं, या मित्र के कारण उन्हें सफलता में अवरोध आते हैं। 'राजा–रानी', 'सेठ–सेठानी की कहानी' की कथा के नायक अपने में रत रहते हैं। इसी कारण नायक का सरलतापन, भोलापन और सुधारवादी मानस के कारण उनमें कही भी ईर्षा, द्वेष, कुंठा या ग्रंथि अथवा कुछ ऐसी बातें नहीं मिलती जो नायक की मानसिकता को असर पहुँचाये ।

सामाजिक उपन्यास में नायक का मनोविश्लेषण कर पाने की संभावना बहुत कम रहती है। इस समय के उपन्यासकारों का मूल उद्देश्य समाज सुधार है, इसलिए समाज और समाज की समस्याओं का

निरूपण ही अधिक उभरा है। अत: केन्द्र में नायक नहीं रह पाता है। पात्रों की क्रिया–प्रतिक्रिया सामाजिक परिप्रेक्ष्य में अधिक निकट लगती है।

(३) ऐतिहासिक उपन्यासों के नायक :

अतीत से प्रेरणा लेकर ऐतिहासिक उपन्यासों की रचना करनेवाले कई उपन्यासकार हैं। ऐसा भी नहीं है ये उपन्यास केवल शुद्ध ऐतिहासिक कथा या पात्रों को लेकर लिखे गये हैं। इसमें कुछ रोमेन्टिक बातें और नायक के चरित्र में काफी परिवर्तन दिखाई पडता है। ऐतिहासिक उपन्यासकारों में किशोरीलाल गोस्वामी का नाम सर्वप्रथम आता है।[५] गोस्वामीजी ने 'लवंगलता' या 'आदर्शबाला', 'हृदयहारिणी', या 'आदर्श रमणी', 'गुलबहार का आदर्श', 'भ्रातृस्नेह', 'लखनऊकी कब्र', 'लाल कुँवर वा शाही महल' जैसे उपन्यास लिखे हैं। इसी दौर में गोस्वामीजी के अलावा ऐतिहासिक उपन्यास साहित्य के क्षेत्र में अपना योगदान जिन्होंने दिया हैं, उनमें से एक हैं– 'गंगाप्रसाद गुप्त। आपने 'वीरपत्नी', 'कुँवरसिंह सेनापति', 'पुना में हलचल' तथा पंडित बलदेव प्रसाद का 'पृथ्वीराज चौहान', मुन्सी देवीप्रसाद का 'रुठी रानी', मेहता लज्जाराम शर्मा का 'जुझार तेजा' आदि हैं। ज्यादातर ऐतिहासिक उपन्यासों के नायक सद् और असद् के रूप में देखने को मिलते हैं। नायक स्वयं उभरकर पाठकों के सामने नहीं आये हैं । बल्कि उपन्यासकार ने अपनी लेखनी से नायक का परिचय दिया है। इस दौर के ऐतिहासिक उपन्यासों के नायकों में शौर्य के लक्षण दिखते हैं। कभी–कभी नायक स्वयं भी समाज या लोगों का हित न देखकर अपनी ही इच्छा से निर्णय लेता है। कुल मिलाकर ऐतिहासिक उपन्यासों के नायक में मनोवैज्ञानिकता का संस्पर्श नहीं मिलता है। वे केवल इतिहास की बातों को लेकर हमारे सामने आते हैं।

(२) प्रेमचंद युग के नायक :

प्रेमचंद युग तक आते–आते नायक अपनी सही भूमिका निभाने में सक्षम होने लगा। अब नायक

उपन्यासकार के हाथों की कठपूतली न बने रहकर, स्वतंत्र व्यक्तित्व के साथ उभरने लगा। इस युग का नायक समाजसुधारक, एवं आदर्शवादी ज्यादा दिखता है। अब उपन्यास में नायक का महत्व बढने लगा । प्रेमचन्द के सहधर्मी अनेक सशक्त उपन्यासकार हैं, जिनके उपन्यासों के नायक अपनी विशिष्ट प्रतिभा एवं व्यक्तित्व लेकर पाठक के समक्ष उपस्थित हुए हैं। अध्ययन की सीमा के मद्दे नजर निम्नाकित उपन्यासकारों के नायक पर विचार–विमर्श सभीचीन होगा।

(१) प्रेमचंद

(२) प्रसाद

(३) वृंदावनलाल वर्मा

(४) भगवतीप्रसाद बाजपेयी।

(१) प्रेमचंद के नायक :

प्रेमचंद मूलत: सामाजिक उपन्यासकार हैं समीक्षकोंने प्रेमचंद को हिन्दी उपन्यास साहित्य का अग्रदूत कहा अपनी औपन्यासिक सृजन यात्रा का आरंभ उर्दू से करनेवाले प्रेमचन्द ने अपने उर्दू में लिखे उपन्यासों का उल्था हिन्दी में किया था। आपने हिन्दी उपन्यास साहित्य के नायकों को जो जितना सबल बनाया है, वैविध्य दिया उतना ही शायद कोई साहित्यकार कर पाया हो। समस्यामूलक उपन्यासकार होने के कारण आपके नायकों का सामाजिक जीवन से सरोकार है । इस बात को लेकर डॉ (श्रीमती) ओमशुक्ल ने कहा है कि– ''कथा और पात्र का यह सम्बन्ध स्वाभाविक होने के साथ–साथ अनिवार्य भी है। कथावस्तु अन्तत: घटनाओं का सम्मिलन है और घटनाओं को जन्म देनेवाला कोई व्यक्ति अथवा पात्र ही होता है। घटना की कोई स्वतंत्र सत्ता नहीं है, इसलिए घटना का पात्र पर निर्भर होना भी, अंत में कथा की पात्र–निर्भरता का कारण बन गया है।[६] प्रेमचंदने कुल १२ उपन्यास हिन्दी साहित्य को दिये हैं। उनके औपन्यासिक नायकों पर दृष्टिपात करना अपेक्षित है।

उपन्यास – नायक

(१) प्रेमा – अमृतराय ।

(२) सेवासदन – गजाधर प्रसाद।

(३) वरदान – प्रतापचंद ।

(४) प्रेमाश्रम – प्रेमशंकर ।

(५) रंगभूमि – सुरदास ।

(६) कायाकल्प – चक्रधर ।

(७) निर्मला – मुन्शी तोताराम ।

(८) गबन – रमानाथ ।

(९) कर्मभूमि – अमरकान्त ।

(१०) गोदान – होरी ।

(११) मंगलसूत्र – देवकुमार ।

प्रेमचंद के उपन्यासों के नायक की चर्चा करने से पहले मैं दो बातें स्पष्ट करना चाहूँगा कि 'प्रेमाश्रम' उपन्यास के नायक के बारे में द्विधा है कि नायक कौन है ? किन्तु उपन्यास के आरंभ से लेकर अंत तक कथानक ज्ञानशंकर के साथ चलता है । किन्तु प्रेमशंकर के विदेश से लौटने पर ज्ञानशंकर की दिशा ही बदल जाती है, और उपन्यास में प्रेमचंद ने प्रेमशंकर से ही आदर्श का पालन करवाया है। नैतिक परिधियों भी प्रेमशंकर में देखते हैं और उनमें ही तत्कालीन मनोभाव है । अत: प्रेमशंकर को नायक मानना उचित होगा ।

'निर्मला' उपन्यास में दहेज से उत्पन्न अनमेल विवाह की हृदय विदारक कथा हैं जो मूलत: नायिका प्रधान उपन्यास है । दहेज और अनमेल विवाह समाज का कलंक है इसमें निर्मला उपन्यास की नायिका है । किन्तु प्रेमचंद ने निर्मला के पति तोताराम के चरित्र के द्वारा समाज में मानव हृदय की पर्तों को खोला है। अत: उपन्यास का नायक निर्मला का पति मुन्शी तोताराम है ।

प्रेमचंदने लिखा है कि– ''मैं उपन्यास को मानव चरित्र का चित्र मात्र समझता हूँ, और उसके रहस्यों को खोलना ही उपन्यास का मूल तत्व है।''[७] इस परिभाषा में प्रेमचंदजी ने गहरी बात कही है। मानव चरित्र की ग्रंथियों को खोलना–सुलझाना कोई सरल बात नहीं हैं मानव चरित्र के उद्‌घाटन के लिए उपन्यास में अनेक परिस्थितियों का चित्रण अनिवार्य हो जाता है जो नायक पर ही निर्भर करता है और प्रेमचंदने अपने नायकों के द्वारा यह बात सिद्ध की है ।

वैसे तो प्रेमचंद आदर्शोन्मुखी यथार्थवादी कथाकार है। स्वाभाविक है कि उनके नायक भी आदर्शवादी ही होंगे । प्रेमचंद के नायक समाज से, जमीरदारों से या समाज के नकली ठेकदारों से संघर्ष करते पाये जाते हैं। चाहे वे धर्म को लेकर हो या जाति को लेकर हो या अपने अधिकार का लेकर क्यों न हो । अत: उनके नायकों में द्वन्द्व और संघर्ष की स्थिति दृष्टिगत होती हैं । प्रेमचंद ने तत्कालीन युग के उपन्यासकारों की भाँति नायक का चरित्र या नायक की अच्छाई–बुराई का वर्णन स्वयं किया है । कभी–कभी आकृति वर्णन के द्वारा ही नायक को उभारा है । उदा. के तौर पर– 'निर्मला' में मुन्शी तोतराम की अधेड अवस्था का वर्णन इस प्रकार किया है– ''वकील साहब का नाम था मुन्शी तोतराम। साँवले रंग के मोटे ताजे आदमी थे, उम्र तो अभी चालीस से अधिक न थी । पर वकालत के कठिन परिश्रम ने सिर के बाल पका दिये थे । व्यायाम करने का उन्हें अवकाश न मिलता था यहाँ तक कि कहीं घूमने भी न जाते थे, इसलिए तोंद निकल आई थी ।

प्रेमचंद के नायक के बारे में निम्नलिखित निष्कर्ष निकाले जा सकते हैं–

(१) प्रेमचंद के नायक में चरित्र का मनोवैज्ञानिक विकास भी मिलता है। नायक संघर्षात्मक स्थिति में आगे बढता है । विभिन्न अनुकूल एवं प्रतिकूल परिस्थतियों से झूझकर य नायक स्वयं अपना रास्ता बना लेते हैं। अमृतराय, प्रेमशंकर, अमरकान्त आदि ऐसे ही नायक है ।

(२) 'प्रेमचंद' के नायक में पर्याप्त मनोवैज्ञानिकता और अंतर्द्वन्द्व होने पर भी उनमें शुद्ध मनोवैज्ञानिकता नहीं है। उनके नायकों में स्थिरता है। नायक का जो रूप उपन्यास के प्रारंभ में दिखता है, वही अंत तक बना रहता है । प्राय: सभी नायकों की मनोवृत्ति जीवन पर्यन्त अविचल रहती है। उनके मन में कई बार मनोविकार उठते है , पर उनकी परिसमाप्ति उसी मनोविकार में हो जाती है। प्रेमचंद के प्रसिद्ध कथा नायक अमृतराय(प्रतिज्ञा), प्रेमशंकर(प्रेमाश्रम) सूरदास(रंगभूमि) और होरी (गोदान) आदि जीवन संघर्ष की भीषण हलचलों में भी नहीं बदलते । प्रेमचंद के सभी नायक समतल हैं किसी भी परिस्थिति में बदलते नहीं. पीछे कदम नहीं होते।[९]

(३) प्रेमचंद के कुछ विवाहित नायक अपने दाम्पत्य जीवन से भी असंतुष्ठ हैं। इनमें गजाधर, प्रेमशंकर, तोताराम, अमरकान्त आदि समाविष्ट किये जा सकते हैं।

(४) ''प्रेमचंद अपने नायकों के चरित्रांकन में अत्यंत उदार रहे हैं। उनका व्यंग्य केवल प्रतिकूल नायकों एवं पात्रों में व्यक्त होता है। प्रेमचंद ने अपने नायकों को अपना दृष्टिकोण प्रस्तुत करने की पूरी स्वतंत्रता देते हुए भी स्वयं को अपना दृष्टिकोण अभिव्यक्त करनेवाले प्रतिनिधि के रूप में भी प्रस्तुत किया है। अमृतराय, प्रेमशंकर, अमरकान्त इसके उदाहरण हैं। इसलिए प्रेमचंद के नायक स्वाधीन होते हुए भी स्वच्छंद नहीं है। उन पर लेखक के आदर्श का अंकुश है। १०

प्रेमचंद के नायकों के बारे में डो. रामरतन भटनागरने कहा है कि– ''इसमे संदेह नहीं कि दूबले चरित्र(नायकों) को अपनी रचनाओं में (गजाधर, रमानाथ, तोताराम आदि) महत्वपूर्ण स्थान देते हुए भी

प्रेमचंद सबल चरित्र की ओर विशेष रूप से आकृष्ट हुए हैं और उन्होंने चरित्र नायकों निर्माण में अपनी प्रतिभा का सारा बल लगा दिया है।[११]

प्रेमचंद के नायकों में मनोविश्लेषण ढूँढेने पर तो मिल सकता है, किन्तु प्रेमचंद का कोई नायक शुद्ध मनोवैज्ञानिक आधार पर निर्मित नायक नहीं हैं। प्रेमचंद मानव मनोविज्ञान के ज्ञाता अवश्य थे, किन्तु उनका दृष्टिकोण पात्रों के आचरण का मनोविश्लेषण या आचरण के रहस्यों का उद्‌घाटन करना मनोवैज्ञानिक सिद्धांतो के आधार पर नहीं था। वे अपने पात्रों को सामाजिक परिस्थिति में ढालकर उनकी प्रतिक्रियाओं का निरूपण करते रहे । इनके मूल में सामाजिक दृष्टिकोण है, नहीं कि मनोविश्लेषणात्मक।

(२) जयशंकर प्रसाद के उपन्यासों के नायक :

प्रसादजी मूलत: कवि थे किन्तु समाज की प्रचलित मान्यताओं, उसके निर्धारित मूल्यों तथा विधि निषेधो के प्रति घोर अनास्थाएँ छा गई थी। उन सभी को प्रकाश में लाने तथा उनका पर्दाफास करने के लिए बाद में उपन्यास भी लिखें। आपने 'कंकाल', 'तितली' और 'इरावती'(अधूरा) उपन्यासों की भेट हिन्दी साहित्य को दी है। प्रसादजी ने यथार्थवादी दृष्टिकोण अपनाकर वास्तविक चित्रण करने का प्रयास किया। साहित्य के क्षेत्र में इस यथार्थवादी प्रवृत्ति की व्याख्या करते हुए उन्होंने कहा है कि–

'उस व्यापक दु:ख और संबधित मानवता को स्पर्श करनेवाला साहित्य यथार्थवादी बन जाता है। इस यथार्थवादी में अभाव, पतन, वेदना के अंश प्रचुरता से होते हैं। वेदना से प्रेरित होकर जन साधारण के अभाव और उनकी वास्तविक स्थिति तक पहुँचने का प्रयत्न यथार्थ साहित्य करता है ।[१२]

प्रसाद ने कंकाल में जहाँ समाज की कठोरता खोखले आदर्श, धार्मिक पाखंड और उसकी जर्जरावस्था का चित्रण किया है, वहाँ 'तितली' में उन्होंने समाज के उज्जवल पक्ष का चित्रण किया है।

'कंकाल' का शाब्दिक अर्थ है– 'हड्डियों का ढाँचा और लाक्षणिक अर्थ है– 'खोखली और

जर्जरित सामाजिक स्थिति। कथा नायक विजय को अंत में कंकाल दिखाकर समाज की कठोरता, खोखले आदर्श, धार्मिक पाखंड और उसकी जर्जरावस्था का सुन्दर चित्रण है।

'तितली' शब्द से सहज उल्लासमय, सुन्दर और हर्ष–प्रफुलित मन:स्थिति की प्रतिध्वनि निकलती है। प्रसाद ने 'कंकाल' में समाज के उज्जवल पक्ष का चित्रण किया है। नायिका बंजो द्वारा ग्रामीण विकास की बात तथा प्रगति की चर्चा है। इन्द्रदेव, मुकुन्दलाल आदि नायक और सहनायक को अच्छी और पुरानी जमींदारी प्रथा के जमीदारों के रूप में चित्रित किया गया हैं।

'इरावती' आपका अधूरा उपन्यास है। जिसमें बौद्ध धर्म के पतन काल के चित्रण द्वारा दिखाने के लिए प्रसादने 'इरावती' की रचना आरंभ की थी कि–

'किस प्रकार समाज को सुन्दर बनाने के लोभ में भगवान तथागत द्वारा निर्दिष्ठ श्रेष्ठ पथ को रूढियों में बाँध देने से बनता–बनता बिगड गया । हमारी अहिंसा हमारी हिंसा करने लगी, हमारा प्रेम हमी से द्वेष करने लगा और धर्म पाप बनता गया।''[१३]

– प्रसाद के नायक समाज सुधारक के रूप में चित्रित किये गये है।

– प्रसाद के नायक रुढियों और अंधविश्वास पर कठोर व्यंग्य करते हैं । जैसे–

माघ की अमावस्या की गोधूली में प्रयाग के बाँध पर प्रभात का सा कलरव तथा धर्म लूटने की धूम कम हो गयी है, परंतु बहुत से घायल और कुचले कुछ अर्धमृतकों की आर्त ध्वनि उस पावन प्रदेश को आशीर्वाद दे रही है। स्वयं सेवक उन्हें सहायता पहुँचाने में व्यस्त हैं। यों तो प्रति वर्ष यहाँ पर जनसमूह एकत्र होता है, पर अब की बात कुछ विशेष पर्व की घोषणा की गयी थी, इसलिए भीड अधिकता से हुइ।[१४] प्रसाद के नायक समाजवाद के सिद्धांतो के कट्टर समर्थक थे। और देश में स्वस्थ प्रगतिशील समाज की स्थापना करना चाहते थे।

अत: प्रसाद के नायक शुद्ध सामाजिक हैं।

(३) वृंदावनकाल वर्मा के उपन्यासों के नायक :

प्रेमचंद युग के सजग उपन्यासकारों में हम वृंदावनकाल वर्मा का नाम गर्व से ले सकते है। आपने सामाजिक एवं ऐतिहासिक उपन्यासकार के रूप में दोहरी जिम्मेदारी सफलतापूर्वक निभायी है।

''वृंदावनलाल का अपनी जन्मभूमि बुंदेल खंड के प्रति विशेष अनुराग है। इसलिए उन्होंने बुंदेलखंड के इतिहास को अपनी रचना में पुन:जीवित करने का प्रयास किया है।'[१५] आपने 'गढकुण्डार' को छोडकर सभी उपन्यास ऐतिहासिक विभूतियों के नाम पर ही लिखे हैं; जो निम्नांकित हैं 'विराटा की पद्मिनी', 'झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई', 'कचनार' 'मृगनयनी' और 'माधवजी सिंधिया'। 'गढकुडार' को छोडकर आपके उपन्यास नायिका प्रधान हैं, जितने भी पुरुष पात्र या नायक है– शूरवीर और यौद्धा ही है।

''वर्माजी के उपन्यास मूलत: इतिहास की आधार भूमि पर अवस्थित हैं, किन्तु इतना होते हुए भी सफल उपन्यासों में अपेक्षाकृत सभी रूपों का समावेश आपने अपने उपन्यासों में किया है। उपन्यासों के अंतर्गत आए हुए भिन्न–भिन्न प्रकार के अंतर्द्वन्द्वों को देखकर स्पष्ट लगता है कि उपन्यासों में मनोविश्लेषण की महत्ता को भी आप स्वीकार करते हैं, क्योंकि अंतर्द्वन्द्व आप की कथा में प्रभाव डालता स्पष्ट दिखाई पडता है।[१६]

वर्माजी के उपन्यास के नायक नायकसिंह, कुंजरसिंह तथा दिलीपसिंह, डोडीसिंह, राजमानसिंह गुजरात का नवाब महमूद बर्घरा, सिकंदर लोदी आदि ऐतिहासिक पात्र हैं। आप अज्ञेय, इलाचन्द्र जोशी की तरह ऐसे पात्र नहीं ले आते जो मानसिक रोगों से ग्रसित हो। तथा अपनी उपस्थिति से लेखक को मनोविश्लेषण में सहायता रहे। आपके नायक–

– आदर्शवादी हैं।

– उपन्यास ऐतिहासिक होने के कारण अधिकांश नायक सामंतवर्ग के चुने है। नायक, राजा, सरदार या नवाब हैं।

– शौर्य, आत्म बलिदानी एवं आत्मोसर्ग की प्रवृतियों के प्रतीक है।

– आप नये पात्रों के चक्कर में न पडकर ऐतिहासिक पात्रों को लेते हैं। मतलब नायक के नाम जाने–माने, पहचाने लगते हैं।

– समाज की दैवी और आसुरी प्रवृतियों के प्रतीक आदर्श और खल पात्रों को लेकर वृंदावनलाल वर्मा ने समाज का एक सजीवचित्र खींचना चाहा है। कहना न होगा कि आसुरी प्रवृत्तिवाले खलपात्रों के चित्रण से नायक अधिक उभरकर सामने आये हैं। वर्माजी के प्रमुख पात्र किसी न किसी आदर्श की आराधना की ओर प्रेरित होते है।[१७]

(४) भगवती प्रसाद बाजपेयी के उपन्यासों के नायक :

बाजपेयी का रचनाधर्म प्रमचंद युग से हुआ। बाजपेयी ने अबतक चालीस से अधिक उपन्यास लिखे हैं जिनमें प्रमुख हैं– 'चलते–चलते' 'निमंत्रण', 'यथार्थ के आगे', 'टूटा टी सेट', 'विश्वास का बल', 'सपना बिक गया', 'सूनी राह'आदि । प्रेमचंद की ही तरह उन्होंने भी व्यापक सामाजिक पृष्ठभूमि को अपनाया है। आपके नायक–

– समाज से कटकर नहीं रहते, पर वे समाज में रहकर भी उसमें पूरी तरह रम नहीं पाए।

– समाज की रूढ परंपराओं और पुरातन मूल्यों के प्रति आपके नायक विद्रोह करते हैं।

– कुछ नायक अर्थार्जन की विभीषिका के शिकार भी हैं।

(५) भगवती चरण वर्मा के उपन्यासों के नायक :

कथानकों की दृष्टि से वर्माजी के उपन्यासों को मोटे रूप से चार भागों में बाँटा जा सकता है– इतिहास का आभास देनेवाले उपन्यास, जो न तो सामाजिक अथवा राजनीतिक कहें जा सकते हैं और न ही शुद्ध ऐतिहासिक। इस कोटि में 'पतन', 'चित्रलेखा' आदि है। दूसरा वर्ग ऐसे उपन्यासों का है जिसमें

प्रेम तथा रोमान्स का सहारा लेकर नारी विषयक विभिन्न समस्याओं और बदलते हुए मूल्यों को उद्‌घाटित करने का प्रयत्न किया गया है। इसमें भी 'चित्रलेखा', 'तीन वर्ष', 'आखिरी दाँव', 'अपने खिलौने', 'फिर वह नई आई' तथा 'रेखा' है। तीसरे वर्ग के उपन्यास राजनीतिक उपन्यास की परिस्थिति में रखे जा सकते हैं । जिनमें सामाजिक समस्याओं का उल्लेख प्रसंगवश किया गया है, पर जिनका मूल स्वर शुद्ध राजनीतिक है। इनमें वर्माजी की सबसे महत्वपूर्ण कृतियाँ ('चित्रलेखा' को छोडकर) ली जा सकती है। इनमें 'टेढे–मेढे' रास्ते, 'भूले बिसरे चित्र' सामर्थ्य और सीमा 'सीधी–सच्ची' बातें 'सबहि नचावत राम गोसाई' एवं 'प्रश्न और मरीचिका' आदि समाविष्ट हैं चौथा वर्ग हैं– आत्म चरितात्मक या आत्मकथनात्मक शैली के उपन्यास, जिसमें अकेली कृति 'धुप्पल' ली जा सकती है।

वर्माजी के नायक समाज के विभिन्न वर्गो से संबंधित हैं। 'चित्रलेखा' का बीजगुप्त, तीन वर्ष का अजित, 'टेढे–मेढे' रास्ते का रामनाथ तथा 'सीधी–सच्ची' बातें का जसवन्त कपूर सामन्तवादी व्यवस्था के पतनोन्मुखी समाज की कुरीतियों को प्रस्तुत करतें हैं। तो कुछ पूंजीवादी विकास के साथ नायक पैसा और लक्ष्मी की आराधना करते हैं, तो कुछ आध्यात्मिक बातें लेकर आये हैं।

(३) प्रेमचंदोत्तर काल :

प्रेमचंदोत्तर काल में जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी, उपेन्द्रनाथ 'अश्क' रांगेय राघव, आदि उपन्यासकार हैं इनमें जैनेन्द्रकुमार, अज्ञेय और इलाचन्द्र जोशी के नायकों पर चर्चा हम यथास्थान करेंगे । अतः कुछ अन्य उपन्यासकारों के नायक पर दृष्टिपात करना सभीचीन होगा।

प्रेमचंदोत्तर काल में राजनैतिक उपन्यासों की परंपरा शुरु हो जाती है।

यशपालजी के उपन्यासों में मार्क्सवादी विचारधारा स्पष्टतः दिखती है। आपने देशद्रोही, 'पार्टी कामरेड', 'दादा कामरेड', 'दिव्या', 'अमिता', 'मनुष्य के रूप', 'झूठा–सच' आदि उपन्यास लिखें

है। 'दिव्या' और 'अमिता' दो ऐतिहासिक उपन्यास हैं और जिनका नामकरण नायिकाओं के नाम पर है। शेष सभी उपन्यास कम्युनिस्ट पार्टी और नीति तथा सिद्धांतो को ध्यान में रखकर रचे गये हैं। तो 'मनुष्य के रूप' में 'सोमा' की कथा के द्वारा मानवमन की स्थिति और मानव को परिस्थिति का दास बनाकर चिंतन का रूप चित्रित किया है। 'झूठा–सच' में 'कनक' की मनोदशा के वर्णन द्वारा जयदेव के प्रति उसका प्रणय चित्रित हुआ है। 'दादा कामरेड' में अमरनाथ के रूढिवादी और संशयीग्रस्त चरित्र पर प्रकाश डालते हुए उनकी मानसिक स्थिति को उद्धेलित किया हैं।

हजारी प्रसाद द्विवेदी प्रेमचंदोत्तर काल के उपन्यासकार के रुप में उभरते हैं। आपने 'बाणभट्ट की आत्मकथा', 'चारुचन्द्र लेख', 'कादम्बरी', और 'हर्षचरितम्' जैसे उपन्यास की रचना की है। आपके उपन्यासों के नायक अलग–अलग परिस्थितियों के साथ आये हैं जो युग की स्थिति और राजनीति तथा सामाजिक पृष्ठभूमि में चित्रित किये गये हैं। और द्विवेद्वीजी को इसमें पर्याप्तः सफलता मिली है।

उपेन्द्रनाथ अश्क मूलतः नाटक के जीव हैं। फिर भी प्रेमचंदोत्तर कालीन साहित्य उपन्यास में आपका विशिष्ट योगदान है। आपने 'गिरती दिवारे', 'गर्म राख', 'बडी–बडी आँखे', 'पत्थर अल पत्थर' उपन्यास लिखे हैं। आपके उपन्यासों का विषय मूलतः मध्यमवर्गीय परिवारों से संबद्ध व्यक्तियों की परिस्थितियों पर आधारित है। आप के नायक बिल्कुल सरल और समाज को प्रेरणा देनेवाले हैं।

इनके अलावा रामेश्वर शुक्ल–'अंचल', अमृतलाल नागर, रांगेय राघव, राहुल–सांकृत्यान, चतुरसेन शास्त्री, आँचलिक उपन्यासकारों में फणीश्वनाथ नाथ, रेणु, नागार्जुन, उदयशंकर भट्ट, भैरवप्रसाद गुप्त, रामदरशथ मिश्र, शिवप्रताप सिंह, मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों में धर्मवीर भारती, देवराज और अन्य उपन्यासकारों में राजेन्द्र यादव, मन्नूभंडारी, ममथनाथ गुप्त, प्रभाकरमांचबे, श्रीलाल शुक्ल आदि हैं।

प्रेमचंद पूर्व के नायक, प्रेमचंद युग के नायक और प्रेमचंदोत्तर युग के नायकों में दृष्टिगत परिवर्तन निम्नानुसारि हैं।

(१) प्रेमचंद पूर्व के नायक वैविध्यपूर्ण थे, क्योंकि उपन्यासों का क्षेत्र विविध विषयों से संबद्ध रहा है जब कि प्रेमचंद युग में सामाजिक और राजकीय विषयवस्तु होने के कारण नायक का क्षेत्र विस्तृत रहा है। मतलब नायक व्यापक पृष्ठभूमि प्राप्त हुई है।

(२) प्रेमचंद पूर्व के नायक वर्गगत थे। प्रेमचंद युग में नायक समाजोन्मुखी बनकर आये। बाद में मिश्रित नायक देखे जा सकते हैं जिसमें व्यक्ति और जाति का समन्वय मिलता हैं।

(३) प्रेमचंद पूर्वकाल में नायक उच्चकुलोत्पन्न अभिजात्य वर्ग के रहे। किन्तु प्रेमचंद युग में उच्चवर्ग, मध्यम वर्ग, निम्न मध्यम वर्ग एवं किसान और भिक्षुक वर्ग का भी समावेश किया जा सकता है । प्रेमचंदोत्तर युग में नायक का क्षेत्र विस्तृत रहा । नायक विभिन्न वर्ग के देखें जा सकते हैं।

(४) प्रेमचंद पूर्व युग के नायक में महामानव के दर्शन होते हैं; जो समाज का हित करनेवाले कल्याणकारी तथा ठोस आदर्शवादी नायक लगते हैं; जब कि प्रेमचंद युग में समाज के हित के साथ तत्कालीन युगबोध से सम्पृक्त आदर्शवादी नायक आये। परवर्ती उपन्यासकारों के उपन्यास साहित्य में लघुमानव अपनी पूरी लघुता दुर्बलता एवं शूद्रता के साथ उभरकर नायक के रूप में प्रतिष्ठित व्यक्तित्व हुआ।

(५) प्रेमचंदपूर्व के नायक लेखक के मानस की उपज हैं। प्रेमचंद युग का नायक स्वतंत्र जबकि व्यक्तित्व लेकर सामाजिक पृष्ठभूमि पर उतर आया किंतु प्रेमचंदोत्तर युग में नायकलेखक के विचारो के वाहक रहे । इसकाल के उपन्यासो में बहिरंग पक्ष की अपेक्षा अंतरंग पक्ष पर अधिक जोर दिया जाने लगा।

प्रेमचंदोत्तर काल वैयक्तिक चेतना के उदय का काल है। इस युग के उपन्यासकारों ने समाज को व्यक्ति के दृष्टिकोण से मूल्यांक्ति करना चाहा है। वैसे भी इस काल के उपन्यासकारों पर पश्चिम के दो

प्रबल विचारक काल मार्क्स एवं सिगंमड क्रापड का प्रभाव स्पष्टत: परिलक्षित होता है। एक का क्षेत्र अर्थ है– तो दूसरे का काम । मानव जीवन की पारिचालक ये दो मूलभूत वृत्तियाँ है। कामवृत्ति को केन्द्र बनाकर हिन्दी के कुछ मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार उभरकर आये हैं; वे हैं जैनेन्द्र, इलाचंद्र जोशी और अज्ञेय। अगले अध्याय में इन तीनों मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों के नायकों को तुलनात्मक दृष्टिकोण से मूल्यांकिन करना अपेक्षित है।

***

–: संदर्भ सूचि :–

(१) चन्द्रकान्ता – देवकीनंदन खत्री – 'भूमिका से'

(२) हिन्दी साहित्य का इतिहास – रामचन्द्र शुक्ल पृ. ४६९

(३) चन्द्रकान्ता संतति – देवकीनंदन खत्री – पृ. ३४

(चौदहवाँ हिस्सा)

(४) नूतन ब्रह्मचारी – बालकृष्ण भट्ट पृ. २१

(५) प्रेमचंद के उपन्यासों में नायक की परिकल्पना

– डॉ. (श्रीमती) प्रतिभा कोटक पृ. ४०

(६) हिन्दी उपन्यास की शिल्प–विधि का विकास–

– डॉ. (श्रीमती) ओम शुक्ल पृ. ९९/१००

(७) कुछ विचार–प्रेमचंद पृ. ४७

(८) 'निर्मला' – प्रेमचंद पृ. ४०

(९) प्रेमचंद के उपन्यासों में नायक की परिकल्पना

–डॉ. (श्रीमती) प्रतिभा कोटक पृ. १८२

(१०) वहीं – पृ. १८२

(११) वहीं – पृ. १८५

(१२) काव्य और कला तथा अन्य निबंध–

– जयशंकर प्रसाद – पृ. १४२

(१३) 'इरावती' के आरंभ में प्रकाशित प्रसाद का संकेत पत्र

(उदधृत – हिन्दी वाङमय वीसवी सदीं – डॉ. नगेन्द्र पृ. १८८ / १८९)

(१४) 'कंकाल' – प्रसाद पृ. १३१

(१५) हिन्दी साहित्य की शिल्प–विधि का विकास–

डॉ. (श्रीमती) ओम शुक्ल पृ. १५७

(१६) हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष–

शिवदानसिंह चौहान पृ. ७१

(१७) वहीं – पृ. १७१

***

चतुर्थ अध्याय

इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन

(१) फ्रायड़ की विचारधारा (मनोवैज्ञानिक सिद्धांत)

- चेतन मन
- अचेतन मन
- अर्ध चेतन मन
- इदम्, अहम्, परम अहम्
- जीवनवृत्ति और मरणवृत्ति
- लिबिडो सिद्धांत
- इड़िपस ग्रंथि
- विस्थापन
- प्रक्षेपण
- स्वैर विहार
- तादात्म्य
- द्वन्द्व और कुंठा
- स्वप्न सिद्धांत

(२) एडलर की विचारधारा

– हीनता ग्रंथि

– श्रेष्ठता ग्रंथि

(३) युंग की विचारधारा

(१) सामूहिक चेतना

(४) संदर्भ ग्रंथ – सूची

***

चतुर्थ अध्याय

पहले मनोविज्ञान को मन का विज्ञान माना जाता था । पर अब उसका अर्थ बदला है और यह दो ग्रीक शब्दों 'साईकी' और 'लोगॉस' से 'साईकोलॉजी' बना है। आज से लगभग ४२५ साल पूर्व तक मानसशास्त्री इसे मन (MIND) के अर्थ में स्वीकार करते थे, साईकोलॉजी का अर्थ मस्तिक का अध्ययन मानते थे, लेकिन वीसवीं सदी में इस परिभाषा में परिवर्तन आ गया है। आज मनोविज्ञान के अंतर्गत मन की विविध क्रियाओं, शक्तियों और मनुष्यों का स्वभाव, प्रवृत्तियों, प्रेरणाओं, संघर्षो आदि के रूप में अध्ययन किया जाता है। इसलिए आज मनोविज्ञान को व्यवहार का विज्ञान कहा जाता है। दूसरे शब्दों में कहें तो मनुष्य की बाह्य भाव–भंगिमाओं और कार्य के साथ–साथ आंतरिक और गोपनीय बातों की जानकारी प्राप्त करना भी जरूरी हो गया है। मानव के अंत:करण के रहस्यों को जानने के लिए मनोविज्ञान की बारीकियों की जानकारी बहुत जरुरी हैं। इस बात को लेकर कमल कोठारी ने लिखा हैं–

''पाठक के हृदय में घूसकर उसके कार्यो के प्रत्यक्ष मनोवैज्ञानिक घात–प्रतिघात को अपने मानस के माईक्रोस्कोप से हर सूक्ष्म कण को देख लेना चाहता है। इसलिए कथा की स्थूल प्रवृत्ति चरित्र के सूक्ष्म प्रत्यावर्तनो को कार्य कारणों की खोज की ओर मुड चली है।'' [१]

मनोवैज्ञानिक उपन्यास के बारे में शशिभूषण सिंहल ने लिखा है कि– ''मनोवैज्ञानिक उपन्यास मानव आचरण और उसके प्रेरक मन के पारस्परिक सम्बन्ध का विश्लेषण करता है। मानव क्रियाएँ क्यों और कैसे करता है ? इसका उल्लेख मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में होता है। सूत्र रूप में मानव मनोभूमि का प्रत्यक्षीकरण मनोवैज्ञानिक उपन्यास है।''[२] आधुनिक मनोविज्ञान ने मानवमन की खोज में आश्चर्य जनक उन्नति की है। प्रगति के इस दौर में प्रगति के साथ–साथ मनुष्य की उलझनें भी बढने लगी, मानव इन उलझनों से त्रस्त हो गया, साथ ही साथ इनका हल भी ढूंढने लगा। नई–नई खोजों प्रक्रिया ने मनोविज्ञान के सामान्य ज्ञान में क्रांति उत्पन्न कर दी। इस क्रांति के परिणाम स्वरूप 'मनोविश्लेषण' की प्रक्रिया प्रारंभ

हुई। इसकी शुरुआत फ़ायड से हुई। फ्रायड मूलत: मनोचिकित्सक थे। उनको यह विचार आया कि दबी भावनाओं को अगर दबने ही दिया जाए तो मनुष्य मानसिक रोग का शिकार हो जायेगा, या उसका चेतन अस्तित्व नष्ट हो जायेगा, अत: उसे दबाने की अपेक्षा किसी प्रकार उसको बाहर लाने से मानसिक रोगों का सही उपचार हो सकता है। परिणाम स्वरूप मन की अज्ञात क्रियाओं का फ्रायड और उनके दो शिष्य एडलर और युंग ने भी अचेतन मन की क्रियाओं का अभ्यास करके कुछ सिद्धांत निश्चित किये । इन्हीं मनोवैज्ञानिकों ने मानव मन का अभ्यास और विश्लेषण किया। अत: मानसिक विकारों की चिकित्सा करते समय प्राप्त तथ्यपूर्ण ज्ञान से मनोविश्लेषण की प्रक्रिया का जन्म हुआ है। मनोविश्लेषण की प्रक्रिया के द्वारा मानव मन की स्थिति, भावना एवं ग्रंथियों की जानकारी प्राप्त होती है एवं हिस्टीरिया, चिन्ता तथा मनोग्रस्तता आदि रोग के मरीजों को इस पद्धति से काफी लाभ हुआ है। मनोविश्लेषण पद्धति से दमन को खोजकर प्रतिरोंधो को ढूंढकर, दमित मन को जानकर दमन की मनोवृत्ति को हटाना, अचेतन वस्तु को चेतन में बदल देना और उनके विचारों में आमूल परिवर्तन लाना हैं।

मनोविज्ञान सिद्धांत : (फ्रायड की विचारधारा)

फ्रायड के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतो के साथ–साथ एडलर और युंग ने भी अपने अनुसंधानों तथा मान्यताओं को मात्र मनोचिकित्सा के लिए प्रयुक्त नहीं किया, बल्कि चिकित्सेतर क्षेत्रों में भी उनकी उपयोगित सिद्ध करने का प्रयास किया है।

फ्रायड और उनके दो शिष्य एडलर और युंग ने नवीन मनोवैज्ञानिक खोजों के आधार पर मन के तीन भाग माने हैं– (१) चेतन मन (२) अचेतन मन (३) अर्धचेतन मन।

(१) चेतन मन :

चेतन मन में पात्र पूर्ण जागरुक रहता है और उसके चेतन मस्तिष्क में उहापोह की स्थिति बनी

रहती है। पात्र की समझ में उसका मन पूर्णरूप से स्पष्ट होता है। चेतन मन में मन की सभी ज्ञात क्रियाएँ अनवरत चला करती हैं। इसे चेतना भी कह सकते हैं। 'चेतन' मन का वह भाग है, जो तुरंत ज्ञान का बोध कराता है। चेतन के विकास में समस्त शक्ति की क्षमता का महत्वपूर्ण स्थान है। मनुष्य के सारे विचार एवं प्रवृत्तियाँ अचेतन मन से उत्पन्न होकर चेतन तक पहुँचती है। अत: एवं–

''अचेतन की स्थिति एवं गतिविधि की सूचना हमें उस छाप द्वारा ही मिलती है, जो वह हमारे चेतन मन पर छोड जाता है।''[३]

(२) अचेतन मन :

अचेतन शब्द का अर्थ है– 'अज्ञात' अर्थात् जो स्वयं या अपने बारे में नहीं जानता और जिसका अस्तित्व आश्रयभूत व्यक्ति को भी अज्ञात लगता है।''[४] अनेक अनुभवों से फ्रायड ने देखा कि मन का लगभग तीन चौथाई भाग अज्ञात होता है। हर व्यक्ति कुछ सामाजिक या पारिवारिक या अन्य किन्हीं कारणों से भी इच्छाएँ प्रकट नहीं कर सकता और जानबूझकर उसका दमन करता है। ये इच्छाएँ चेतन मानस के दमन द्वारा अचेतन में चली जाती हैं। अचेतन के अस्तित्व के विषय में फ्रायड ने अनेक प्रमाण दिये हैं–

(१) अचेतन की प्रेरणा हम दमन के सिद्धांत से प्राप्त करते हैं।

(२) वह जो प्रच्छन्न है, पर चेतन होने में समर्थ है और वह जो दमित है और सामान्य ढंग से चेतन होने में असमर्थ है ।[५] अत:दमित होते हुए भी उसका अस्तित्व विद्यमान रहता है और उन्हें दमित रखने में मानसिक शक्ति व्यय होती है। इससे दमन की क्रिया अहितकर या चिंताजनक विचारों पर ही लागू होती हैं।

इस प्रकार दमित इच्छाओं तथा भावनाओं का अध्ययन करते हुए फ्रायड ने अचेतन मन का

अस्तित्व स्थापित किया। उन्होंने बताया कि हिस्टीरीया का प्रमुख कारण अचेतन मन में पडी दमित भावनाएँ हैं और ये भावनाएँ अगर मरीज से किसी भी प्रकार उगहवाई जाय तो मरीज हल्का–फुल्का हो जाता है। इससे अचेतन मनुष्य के व्यवहार को समझने में सहायता मिलती हैं मनोविज्ञान के क्षेत्र में यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि है।

(३) अर्धचेतन :

अचेतन और चेतन के मध्य अर्धचेतन अवस्थित हैं। फ्रायड का मंतव्य है कि अर्धचेतन भी एक प्रकार से अचेतन है। परंतु इसका स्मरण पात्र को सरलता से हो जाता है। अचेतन मन की विषय सामग्री को व्यक्ति की इच्छानुसार चेतन मन में नहीं लाया जा सकता। मनोविश्लेषण, सम्मोहन आदि कुछ विशेष प्रविधियों से ही अचेतन के स्तर के विचार या भावचेतन स्तर पर लाये जा सकते हैं। अत: अचेतन मन की उत्तेजनाएँ चेतन मन में प्रवेश पाने के लिए सदा उत्सुक रहती हैं। किन्तु अर्ध चेतन पर वह प्रहरी के रुप में काम करते अवांछनीय उत्तेजनाओं को आगे नहीं बढने देता।

(४) इदम्, अहम् और परम अहम् :

सन् १९२० के लगभग फ्रायड ने अपने अचेतन सिद्धांत का परिवर्द्धन एवं संशोधन किया और मानव मन को तीन विभागों में विभक्त किया जो निम्नांकित है–

(A) इदम् / इड (ID)

(B) अहम् / इगो (EGO)

(C) अति अहम् या नैतिक अहम् / सुपर इगो (SUPER EGO)

(A) इदम् / इड (ID) :

इदम् पूर्ण रूप से अचेतन होता है इसलिए व्यक्ति को इसका प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं होता। दमित

वासनाए इदम् में शामिल हैं। समाज द्वारा समर्थित आदर्शों से इदम् का कोई सम्बन्ध नहीं है। इदम् समस्त अच्छी–बुरी मूल प्रवृत्तियों का जन्मदाता है, इसलिए यह देशकाल के प्रभाव से भी मुक्त है। ''इड में वह सबकुछ हैं, जो हमें माता–पिता से मिलता है, जो जन्म के समय विद्यमान है तथा शरीर की संरचना में जडीभूत है।[६] फ्रायड के मतानुसार नवागत शिशु में सिर्फ इदम् होता है। उनमें अहम् तथा परम अहम् का पूर्ण अभाव होता है। इदम् में कोई परिवर्तन नहीं होता।''[७] आगे आपने कहा कि– ''मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान के अनुसार इदम् की अभिव्यक्ति समाज द्वारा स्वीकृत मार्ग से अवश्य होनी चाहिए। इससे मानसिक तनाव कम होता है।''[८]

(B) अहम् / इगो (EGO) :

जन्मावस्था में शिशु में सिर्फ इदम् होता है। पर जैसे–जैसे वह बडा होता है, बाह्य जगत के सम्पर्क में आने पर उसमें सभ्यता, संस्कार तथा वैचारिक शक्ति का विकास होता है। इससे अचेतन या इदम् की अवांछनीय उत्तेजनाओं पर नियंत्रण रखना तथा संयम से वर्ताव करने की आवश्यकता जरूरी लगती है। यह कार्य चेतन के द्वारा ही संभव है और इसी चेतन को फ्रायड ने अहम् कहा है। उसका मुख्य कार्य स्वरक्षा है। अतः कहा जा सकता है कि इदम् सुख सिद्धांत से परिचालित होता है तो अहम् यथार्थ सिद्धांत से।

(C) अतिअहम् या नैतिकअहम् / सुपर इगो (SUPER EGO) :

सुपर इगो का सम्बन्ध नैतिकता से होता है। इसे नैतिक अहम् भी कहते हैं। परम अहम् आदर्शवादी है। वह मनुष्य को आदर्शजीवन के पथ पर ले जाना चाहता है। इस तरह परम् अहम् पूर्वचेतन का ही भाग है। इसका विकास पहले माता–पिता से तथा फिर घर, परिवार और समाज से होता है। परम् अहम् एक प्रकार से अहं के प्रतिनिधि के रूप में कार्य करता है। उचित और अनुचित क्या है ? वह परम् अहम् निश्चित करता है।

(५) जीवन–वृत्ति और मरण–वृत्ति :

फ्रायड के मत से मनुष्य में मूलरूप से दो मूल प्रवृतियाँ होती हैं– जीवन वृत्ति और मरण वृत्ति । उनके अनुसार जीवन वृत्ति मूलतः यौन वृत्ति है। मरणवृत्ति अपने को या दूसरों को मिटाने की ध्वंसात्मक वृत्ति है। मरणवृत्ति जब स्वाभाविकता की स्थिति से ऊपर उठकर कुंठा जनित असंतुलित अवस्था में आजाती है। तब उसे स्व–मृत्यु की भावना या मरने की भावना तथा पर मृत्यु की भावना या मारने की भावना उत्पन्न होती है। इन असामान्य मनःस्थितियों से प्रभावित व्यक्ति क्रमशः आत्महत्या एवं हत्या कर डालता है।

(६) फ्रायड का लिबिडो सिद्धांत :

मनुष्य के मस्तिष्क तथा उसके समग्र व्यक्तित्व को परिचालित करनेवाली मूल शक्ति को फ्रायड ने लिबिडो कहा है। यह काममूला और स्वार्थमूला होती है। समाज की नैतिक धारणाओं से लिबिडो मेल नहीं रखती। हमारा चेतन मन इसकी अभिव्यक्ति पर नियंत्रण रखता है। इस विचारधारा का मूल उद्देश्य हिस्टीरीया के कारणों की खोज का परिणाम था। लिबिडो की व्याख्या करते–करते फ्रायड का मनोविश्लेषण एक प्रकार से यौन मनोविश्लेषण बन गया। पर फ्रायड के इस अतियौनवाद को अन्य मनोवैज्ञानिको ने नहीं स्वीकारा। यहाँ तक कि उनके दोनों शिष्य युंग और एडलर भी क्रमशः फ्रायड से अलग हो गये।

(७) इडिपस ग्रंथि :

फ्रायड के मतानुसार जन्म के साथ ही बच्चे में काम वासना उत्पन्न होती हैं। उसमें यौनभावना क्रमशः विकसित होती है जो किशोर अवस्था में कामग्रंथि परिपक्व हो जाती है। कामवासना शैशव से वृद्धावस्था तक बनी रहती है, किन्तु अवस्था के अनुसार उसमें परिवर्तन होता रहता है। फ्रायड का कहना है कि– शैशवावस्था में प्रायः दो वर्षो की आयु के पश्चात् बच्चा माता पिता के प्रति जिस आकर्षण का अनुभव करता है उसे क्रमशः इडिपस तथा इलेक्ट्रा कोम्पलेक्स कहा जाता है।

(८) विस्थापन :

विस्थापन में व्यक्ति अपनी रागात्मक प्रवृत्ति को मौलिक रूप से हटाकर किसी उसे दूसरे लक्ष्य पर आरोपित करता है जिससे उसका कोई ज्यादा सम्बन्ध नहीं है। उदा. के लिए अध्यापक से मार खाकर छात्र अपने दमित क्रोध को अन्य छात्र या किताबों पर उतारता है। कभी गाली देना, झूठ बोलना, अकारण भय (फोबीया) आदि विस्थापन के कारण ही संभव है।

(९) प्रक्षेपण (PROJECTION) :

''प्रक्षेपण वह क्रिया है, जिसके द्वारा अचेतन रूप से व्यक्ति अपनी कमजोरी या प्रवृत्तियों का आरोपण दूसरों पर करता हैं। साथ ही साथ अपने अचेतन संवेग, विचार और इच्छाओं को भी दूसरों पर लादता है।[१०] अंतर्रेक्षण में प्रक्षेपण से विरुद्ध मजबूत होकर परिस्थितियों से व्यक्ति समझौता कर लेता है।

(१०) स्वैर–विहार (FANTASY) :

प्राय: हर व्यक्ति कल्पना द्वारा ही अपनी मानसिक द्विधा एवं संघर्ष को हल्का करता है। लेकिन बडी–बडी कल्पना करना व्यक्ति विकास में हानि पहुँचाता हैं।

(११) तादात्म्य :

''जब कोई व्यक्ति अपने व्यक्तित्व को किसी अन्य व्यक्ति के अनुसार गढने की कोशिश करता है, तब उसकी मानसिक प्रक्रिया को तादात्म्य कहते है।''[११] इस प्रक्रिया में व्यक्ति अपने आदर्श व्यक्ति के साथ तादात्म्य स्थापित करके अपनी गलतियों को सुधारने की कोशिश करता है। उदा. के लिए कोई छात्र अपने अध्यापक के साथ तादात्म्य स्थापित करता है। अच्छे गुणों से तादात्म्य स्थापित करना अच्छी बात है, किन्तु दूर्गुणों को अपनाना अच्छी बात नहीं होगी।

(१२) द्वन्द्व और कुंठा :

आज के युग में मनुष्य की भौतिक, सामाजिक, आर्थिक आवश्यकताएँ प्रबल हैं। लेकिन इन सब आवश्यकताओं की आपूर्ति पर उन्हें पूरी करने के लिए स्पर्धा चलती; जब दो परस्पर विरोधी इच्छाएँ एक साथ सामने आती हैं और उनमें से केवल एक ही की पूर्ति संभव है, तो द्वन्द्व की स्थिति उत्पन्न होती है। कभी–कभी दो में से एक को चुनना हो तब भी द्वन्द्व की स्थिति पैदा होती है।

कभी–जब हमारी सफलता और इच्छा की पूर्ति के मार्ग में अवरोध आ जाता है तब इन अवरोधों से सफलता में बाधा उत्पन्न होने पर हमें हताशा का अनुभव होता है और इस हताशा से ही कुंठा उत्पन्न होती है। कुंठा व्यक्ति की मन:स्थिति पर निर्भर है। कभी ज्यादा लोगों को देखकर, कभी दिये हुए वचन का पालन न होने पर कभी, व्यक्ति का झूठ खुल जाने से या फिर प्रयत्न करने पर भी सफलता न मिलने जैसी स्थितियों मे भीं उत्पन्न होती हैं।

(१३) स्वप्न सिद्धांत :

''स्वप्न सिद्धांत की परिकल्पना फ्रायड का मौलिक योगदान है। उन्होंने इस सिद्धांत को बडा महत्व दिया है।[१२] उनके अनुसार ''स्वप्न व्यक्ति की अतृप्त इच्छाओं का परिणाम होते हैं। अहम् या चेतन मन में उत्पन्न अनैतिक या असामाजिक विचार सामाजिक दबाव के कारण अचेतन मन में चला जाता है। जिसकी स्वप्न में इच्छापूर्ति होती है। जिन इच्छाओं को व्यक्ति चेतन एवं जाग्रत रूप में भोग नहीं पाता, उन्हें स्वप्न के माध्यम से तृप्त करने का प्रयत्न करता है।[१३] फ्रायड और युग ने भी स्वप्न के माध्यम को स्वीकार किया है।

(२) एडलर की विचारधारा :

अल्फ्रेड एडलर ने 'वैयक्तिक मनोविज्ञान' को जन्म दिया। पहले वे फ्रायड़ के ही शिष्य थे, लेकिन

फ्रायड की मानव–जीवन में कामवृत्ति या लिबिड़ो ही प्रधान हैं ऐसी एकान्तिक धारणा को मान्य न करते हुए वे उन से अलग हो गये। उन्होंने अहम् को अधिक महत्व देकर मनोविश्लेषण सिद्धांत का विकास किया। ''एड़लर फ्रायड़ की विपरीत सामाजिकता पर अधिक बल देते हैं। उनका मत है कि प्रत्येक व्यक्ति में सामाजिकता पाई जाती हैं। जब व्यक्ति में सामाजिक गुण का विकास उचित मात्रा में नहीं हो पाता तो उसका व्यक्तित्व असामान्य हो जाता है।''[१४]

एडलर ने मनुष्य की मूल प्रेरणा शक्ति कामवासना न मानकर महत्वकांक्षा या आत्म स्थापन की प्रवृत्ति को विशेष महत्व दिया है। मनुष्य का स्वभाव है कि वह दूसरे व्यक्ति से आगे निकल जाये, या दूसरों पर स्वयं विजय पा ले । इससे उसके अहम् को पोषण मिलता है। परिणामत: व्यक्ति में कामग्रंथि के अलावा लक्ष्यपूर्ति प्रधान रहती है। इसके अभाव में वह पीड़ित रहता है और हीन भावना का अनुभव करता है। एडलर के अनुसार जीवन की प्रथम समस्या काम सम्बन्धी नहीं होती और जीवन में जबतक काम सम्बन्धी समस्याएँ उद्‌भवित होती हैं, तब तक वह मनुष्य की जीवन शैली बन चुकी होती है।

(३) एड़लर के मनोवैज्ञानिक सिद्धांत :

(१) हीनता ग्रंथि (INFERIORITY COMPLEX) और श्रेष्ठता ग्रंथि (SUPERIORITY COMPLEX) :

प्राय: व्यक्ति में शारीरिक या मानसिक स्तर पर किसी न किसी प्रकार की हीनता पायी जाती है । यह हीनता आगे चलकर ग्रंथि के रूप में परिवर्तित हो जाती है, जिसे एड़लर हीनताग्रंथि मानता है।

श्रेष्ठता ग्रंथि का उद्‌भव हीनता–ग्रंथि पर विजय प्राप्त करने की प्रबल इच्छा के कारण ही हो जाता है। यदि हीनता या श्रेष्ठता ग्रंथि का अतिक्रमण होता है तो व्यक्ति मनोरोगी हो जाता है।

(४) युंग की विचारधारा :

एड़लर की तरह वे भी फ्रायड का ही शिष्य थे, किन्तु कुछ सैद्धांतिक कारणों से अलग हो गये। युंग महोदय ने मनुष्य में काम–वासना और रचना शक्ति के प्रभाव को अस्वीकार नहीं किया, किन्तु मानव व्यवहार का मुख्य स्रोत कहा है। उनका मानना है कि– ''प्रत्येक मनुष्य में यही शक्ति कामवासना सर्वश्रेष्ठता, कलात्मकता का निर्माण, खेल तथा अन्य क्रियाओं की स्रोत दायिनी है। उनके अनुसार मनुष्य में स्व–रक्षा ही प्रमुख प्रेरक तत्व है।''[१५]

(१) सामूहिक अचेतन :

''सामूहिक अचेतन मन की मातृभूमि है, और उसके अति अधिक स्वभाव का नियामक भी ।''[१६] युंग का मानना है कि अचेतन मन के मूल स्वरूप को जानने के लिए सामाजिक वातावरण का अध्ययन जरूरी है।

इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास साहित्य में इन तीनों अस्ट्रियन पंडितों फ्रायड़, एड़लर और युंग का प्रभाव हम देख सकते हैं।'' आधुनिक युग के तीनों प्रमुख मनोवैज्ञानिक फ्रायड़, युंग और एड़लर अपने मनोवैज्ञानिक एक्स किरणों के (X-RAY'S) प्रयोग द्वारा मनुष्य की अंतर् चेतना के रहस्य का उद्घाटन करने में अद्भूत रूप से सफ़ल हुए हैं।[१७] कुछ लोग इलाचन्द्र जोशी को फ्रायड़वादी मानते हैं, किन्तु जोशीजी ने इन तीनों को भी पूरी तरह नहीं स्वीकारा। जोशीजी के मतानुसार– ''चाहे फ्रायड़वाद हो, चाहे कोई दूसरा मनोविश्लेषण बाद, किसी का वादी होना एक बात है और उस बात से लाभ उठ़ाना दूसरी बात।''[१८] अर्थात् जोशीजी ने तीनों में से किसी का भी अन्धानुकरण नहीं किया है। फ़िर भी जोशीजी के पात्रों में कहीं न कहीं इनका प्रभाव तो पाया जाता है। जोशीजी के साहित्य में उपर्युक्त सिद्धांतो के साथ–साथ संम्मोहन का विश्लेषण भी है। संम्मोहन में एक व्यक्ति सम्मोहन से दूसरे व्यक्ति के वशीभूत हो जाता है। इलाचन्द्र जोशी के नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन अपेक्षित है।

(१) **संन्यासी :** 'कामुक नंदकिशोर'

नंदकिशोर कथा का नायक हैं। सामान्यत: इस प्रकार का व्यक्ति समाज में उपलब्ध नहीं होता है। वह एक विकृत मनोवृत्तिवाला, अस्वस्थ और अव्यवस्थित व्यक्ति है। उसके अचेतन मानस की गहराई में दमित वासनाओं की ग्रंथियाँ बन गई हैं। ये ग्रंथियाँ उसके चेतन मन को जकड़ लेती है। उसका सारा काम अहं से प्रेरित है। वह समाज में अमंगल उत्पन्न करनेवाला है। वह अपने ही हाथों अपने ही जीवन में दु:ख के बीज बोता है। साथ–साथ अपने संपर्क में आनेवाले अन्य व्यक्तियों के लिए भी दु:ख का कारण बनता है। उसमें दुरुहता अंतर्विरोध, संवेदनशीलता ईर्ष्या आदि भी है। साथ ही वह काम वासना का शिकार हैं। उसकी सारी पशु– वृत्तियाँ अचेतन मन से उठ़कर चेतन मन पर अपना नग्न नृत्य दिखाती है। उसका मानसिक सन्तुलन अज्ञात चेतना की उत्तेजना से विकृत हो जाता हैं।

नंदकिशोर नव–यौवन की नव–भावनाओं से अनभिज्ञ फ्रायड़ कथित **दमित कामवासना** का एक भोला शिकार है। भोला इसलिए कि युवक होने पर भी यौवनगत प्रधान भावना रति को उसने कभी कोई महत्व नहीं दिया, मात्र अध्ययनशील और मननशील बनकर बनारस विश्व–विद्यालय में दिन काट़ता रहा था। व्यावहारिक रूप में अभी वह कच्चा है। किसी भी कुलीन महिला का पीछा करना शिष्टाचार विरुद्ध मानता है। किन्तु उमापति द्वारा उकसाये जाने पर शांति और कमला का वह पीछा करता हैं। उसमें विवेक शून्यता दृग्गोचर होती हैं। यथा– ''उमापति उसी ओर हमें घसीटने लगा। मैं भी ना मरजी सा होकर अनिच्छित पदों से उसके साथ हो लिया। पर कलेजा घड़क रहा था। अपने को अत्यंत पतित, बाजारू, आदमियों से भी बदतर समझ रहा था।''[१९]

दूसरी बार भी उमापति के आग्रहवश वह उनके घर तक चला जाता है। फ़िर स्वयं अपने कृत्य पर विश्लेषणात्मक रूप से वह सोचता है कि मैं उमापति के साथ क्यों गया था। कुछ जानने के लिए या विशेष आकांक्षा रख कर ? इसका उत्तर भी नंदकिशोर स्वयं ही देता है। आगरे में जयन्ती दर्शन ने उसकी दमित

काम–वासना को भड़का दिया था। वह सोच में पड जाता है कि, क्या ''किसी नवीन किशोरी के दर्शन मात्र से हृदय की ऐसी कायापलट हो सकती है, इससे पहले मुझे कभी इसका अनुभव नहीं था। कितने ही युगों से रूध्ध मेरी व्याकुल वासना का बाँध ही बिलकुल ही टूट पड़ा था। जिधर को भी गति पाता था, उसी ओर विस्फुर्सित वायु–वेग से बहने लगे जाता था।''[२०] कि दमित काम की पूर्ति के लिए वहाँ पहुँचा और यहीं ग्रंथि धीरे–धीरे उसमें कामुकता की सृष्टि कर देती है। उसका कामुक रूप पाठ़कों के सामने आता है– ''उसके गभराये हुए चेहरे में और भराई हुई आवाज में नववधू की तरह एक सलज्ज और स्वतंत्र भाव देखकर मैं पुलकित हो उठा।''[२१] कामुक व्यक्ति डरपोक होता है, जिसकी प्रतिक्रिया में ही नंद की अन्तश्चेतना प्रखर हो उठ़ती है। प्रखर अवसाद से भर गई और शांति की ओर पुनः देखकर वह अपने को कापुरुष एवं भीरू समझने लगा। ''पर शांति के मुख की ओर मैं देखता तो मेरा अन्तर्मन मुझे भीरू और कापुरूष कहकर धिक्कारता था।''[२२]

शांति ने एक बार उसे कायर क्या कहा यह बात उसके अंतर्मन में घर कर गई। वास्तव में वह अपने को कायर, प्रमादी और अयोग्य समझने लगा। तभी तो शांति के बल की भीख माँगता है–

''शांति ! शांति ! प्यारी शांति अपनी प्रेममयी आत्मा से मुझ में बल संचालित करो कि समस्त विश्व का बन्धन तोड़कर तुमसे मिल सकूं।''[२३]

नंद एक ओर घोर **अहंवादी** है तो दूसरी और **परम शंकालु** है। इसी अहम् तथा शंका के कारण वह ईषालु भी हो जाता है। शांति के मन को वह ठीक प्रकार से समझ नहीं पाया और उसके शरीर से खिलवाड़ करने लगा। एक बार की मना और नकारात्मक उत्तर पाकर वह तीव्र प्रतिक्रिया का परिचय देता है। ''मैं नहीं जानता था कि तुम्हारे मन के भीतर ऐसे गुप्त और अव्यक्त भाव छीपे हैं। तुम बराबर अपने मन की यथार्थ बातों को मुझ से छिपाती आई हो, और मुझसे कपट रखती हो।''[२४] नंद के इन शब्दों में उसकी अहं मूलक स्वार्थ परायण एवं शंकालु प्रकृति के स्पष्ट दर्शन होते हैं। आगे चलकर उसके कामुक स्वभाव का भी

हमें परिचय होता हैं– ''प्रेम के सम्बन्ध में सिद्धांत रूप से मेरा आदर्श कितना ही ऊँचा क्यों न हो, पर यथार्थ में वह वास्तविक जगत की प्रकृति गत पंकिलता से लिप्त होने के लिए भीतर ही भीतर व्याकुल हो रहा था।''[२५]

शंकाशील स्वभाव तो नंदकिशोर का था ही। वह बलदेव पर भी शंका करता है; क्योंकि वह लघुताग्रंथि से पीड़ित है। शांति को सिर्फ़ शंका से ही नही देखता अर्पितु कह भी देता है कि तुम बलदेव से प्रेम करती हो। ''मेरे मन में एक ओर इर्ष्या की आग बड़े भयंकर रूप से भड़क रही थी और दूसरी ओर इसी कारण उस आग को बुझाने के लिए अपने भीतर शीतल जल के संचय की अत्यंत प्रबल आवश्यकता मुझे महसूस हो रही थी। एक प्रलयंकर द्वन्द्व मेरे भीतर को मथ रहा था। शांति क्या सचमुच इस व्यक्ति से उसी रूप में प्रेम करने लगी है, जिस रूप में वह इस समय तक मुझसे करती आई है।[२६]

नंद अपनी लघुता ग्रंथि के कारण शांति पर शंका करता है और उसे लांछित भी करता है– ''तुम मुझसे ऊबकर बलदेव को चाहने लगी हो, यह बात न होती तो तुम सारी परिस्थितियों को समझते हुए भी कभी बलदेव के यहाँ जाने को तैयार न होती। और वहाँ जाकर तुम बलदेव की बहन को अपने गले का हार दे आई हो तुमने यह प्रेम की भेट परोक्ष रूप से बलदेव को ही दी है।''[२७] इस प्रकार हम नंद में घोर अहंवादी, स्वार्थी, शंकाशील व्यक्तित्व का दर्शन करते हैं।

नंदकिशोर की मानसिक अवस्था के लिए इलाचन्द्रने **स्वप्न और दिवा स्वप्न का** भी उल्लेख समय–समय पर किया है। जब वह जुए में सारे रूपये हार जाता है तो उसकी मानसिक अवस्था अत्यंत बिगड़ जाती है। रात में वह स्वप्न देखता है कि जुए में वह लगातार जीतकर अपनी जेबों में रुपये ठ़साठ़स भर कर जब वापस आता हैं, तो क्या देखता है कि शांति और बलदेव प्रेम–संलाप में मग्न हैं।''[२८] यहाँ स्वप्न के द्वारा नंदकिशोर के मन की दो बातें सामने आती हैं। एक तो यह कि स्वप्न द्वारा जुए में जीतकर

धन कमाने की उसकी इच्छा पूर्ति होती है और दूसरी ओर शांति के प्रति आकर्षण के साथ–साथ जयंती द्वारा अपमानित होने से प्रतिहिंसा की भावना भी व्यक्त होती है। इन दो विरोधी भावों के कारण वह ऐसा विकृत स्वप्न देखता है। मनोविज्ञान मानता है कि किशोर अवस्था में विशेषकर अन्तर्मुखी व्यक्तियों का दिवा स्वप्नों में मग्न होना असाधारण बात नहीं है। नंद किशोर कभी–कभी दिवा स्वप्न में मग्न होकर स्वप्नमयी दुनिया से सुख की आकांक्षा रखता है।

नंद का अहंमन्यात्मक रूप भी उपन्यास में जोशीजी ने चित्रित किया है। जयन्ती एक दिन बातचीत में ही नंदकिशोर को कहती है– ''आप में अभिमान तो है ही, आप चाहते हैं कि जिस स्त्री से आपका सम्बन्ध हो, वह पूर्ण रूप से आप की होकर रहे, उसका भी कुछ स्वतंत्र रूप से अपना कहने को न रहे, उसका शरीर, उसका मन, उसकी प्रत्येक वासना, प्रत्येक कामना आपकी इच्छा की बलि हो जावे, उसके भीतर छिपी हुई कोई गुप्त से गुप्त प्रकृति उसकी होकर न रहे। वह सब बिना किसी असमंजस से आपके पैरो तले स्वयं को समर्पित कर दे। इन दोषों में सबसे बढ़कर है– अहंभाव की ज्वाला बुझाने के लिए प्रकृति के सब तत्त्वों को पूर्ण रूप से होम करने की प्रबल आकांक्षा । पर इस अप्राकृतिक आकांक्षा की तृप्ति कभी संभव नहीं है। इसलिए आपके मन में अशांति और असंतोष के भाव सदा बने रहेंगे और जिसके संपर्क में आप रहेंगे उसके जीवन में भी आप बेचैनी के बीज बोते चले जायेंगे।''[२९] जयन्ती के इन शब्दों में नंदकिशोर के व्यक्तित्व के विविध पहलू उद्‌घाटित हुए हैं जिनसे उसके व्यक्तित्व में निहित विविध ग्रंथियाँ प्रकट हुई है।

नंदकिशोर अपने अपसाधारण व्यक्तित्व से स्वयं परिचित है। वह स्वयं स्वीकार करता है कि–

''जयन्ती यदि एक अपसाधारण स्त्री थी, तो मैं भी एक अपसाधारण पुरुष था। 'अपसाधारण' शब्द का कुछ और अर्थ लगाकर कोई यह न समझे कि मैं साधारण मनुष्यों से बहुत ऊँचा उठा हुआ था। हो

सकता है कि कुछ विशेष बातों से मेरे मन और मस्तिष्क ऊँचे हो उठे हों, पर बहुत सी बातों में मैं साधारण मनुष्यों से बहुत नीचे एकदम नीचे गिरा हुआ था।''[३०] इसी आत्मपीड़न की मन:स्थिति में वह अपने जीवन को नष्ट कर देता हैं।

(२) पर्दे की रानी : 'घूर्त इन्द्र मोहन'

कथा नायक के रूप में इन्द्रमोहन घोर व्यक्तिवादी, अहंवादी और स्वार्थी प्राणी है। पूंजीवाद और टेक्नोलोजी के आज के दौर में भौतिक संपदा के पीछे पागल जमाने में ऐसे व्यक्तिवादी मनुष्यों की कमी नहीं है। ऐसे संकीर्ण दृष्टिकोण को इन्द्रमोहन इन शब्दों में व्यक्त करता है– ''असल बात यह है कि केवल मैं ही इस यथार्थवादी, बौद्धिक युग में अन्तरलोक की असंख्य उदभ्रांत कल्पनाओं में मग्न रहनेवाला व्यक्ति नहीं हूँ, बल्कि ऐसे बहुत से व्यक्ति हमारे प्रतिदिन के समाज में वर्तमान हैं जो बाहर से सहज, सरल और असाधारण सामाजिक जीवन बिताते हुए मालूम होने पर भी भीतर से भयंकर रूप से इन्द्रजाली भावनाओं में मग्न रहते हैं। इस युग का व्यक्ति अपनी अन्तर्गत भावनाओं को छिपाने की कला खूब जानता है– और अपने आपको, एक दूसरे को धोखा देने की कला भी। यही कारण है कि आजकल के बने हुए यथार्थवादिओं की पोल कम खुल पाती है। मुझमें और दूसरे व्यक्तियों में केवल इतना ही अंतर है कि मैं दूसरों को भले ही ठगूँ, पर अपने आपको ठगना नहीं चाहता। मैं स्पष्ट रूप से अपने आगे यह स्वीकार कर लेता हूँ कि मैं बडा आत्मगत हूँ, और मेरा ''मैं'' ही मेरे लिए सबकुछ हैं। और यह ''मैं'' भी कितना बडा है ? जैसा कि मैं कह चुका हूँ कि उसके भीतर सारे संसार की चहल–पहल, कोलाहल, युद्ध और संघर्ष सब कुछ आकर समा जाता है और यह ''सबकुछ'' भी इतना कम स्थान घेरता है कि उसके एक कोने में बेमालूम पडा रहता है।''[३१]

नायक के इस आत्मविश्लेषण के द्वारा उसका देदीप्यमान अहं और व्यक्तिवाद स्पष्ट दिख पड़ता है। वह इतना बड़ा अहम्वादी है कि अपने मन के आगे किसी भी सत्य अथवा पुण्य को हेय समझता है।

इन्द्रमोहन इतना व्यक्तिवादी है कि अपने व्यक्तिवाद, प्रेमचक्रों के आगे सामूहिक विकास और राष्ट्रहित की बात तक नहीं सोचता। दूसरा विश्वयुद्ध चल रहा था। लाखों नर–नारी हाहाकार कर मर रहे हैं, उसे कोई चिन्ता नहीं है। उसे चिंता है तो केवल इस बात की कि शीला शीघ्र क्यों नहीं मर जाती, निरंजना जल्दी से अपना सर्वस्व उसके चरणों में क्यों भेट नहीं कर रहीं ?

इन्द्रमोहन का जीवन के प्रति दृष्टिकोण ही अलग लगता है। उसका मानना है कि व्यक्तिगत प्रेम ही जीवन में सबसे बड़ा है। उसकी प्राप्ति, हित, छल, कपट, झूठ और आडंबर सब उसके दर्शन के सिद्धांत हैं। प्रेम के लिए वह इन सबके अतिरिक्त मृत्यु का भी हँसकर आलिंगन करने को तैयार है और करता भी है। अपने अकल्पनीय षड्यंत्रो द्वारा जब निरंजना को वशीभूत कर उसके कौमार्य से खिलवाड़ कर लेता है। वह निरंजना से काम तृप्ति ही जीवन का चरम लक्ष्य मानता है और कहता है– ''मेरे प्रेम की भीषण ज्वाला के आगे मृत्यु नाचीज है।''[३२] ऐसा कहकर वह चलती हुई गाड़ी के नीचे कट़कर अपने प्राण दे देता है। भावुकता की चरम सीमा को पार कर जाता है और प्रेम के नाम पर अमर हो जाता है ! इस प्रकार यहाँ फ्रायड़ की मरणवृत्ति दृष्टिगत होती है।

इन्द्रमोहन का पात्र पूरी तरह से इस बात पर प्रकाश ड़ालता है कि वह पशुमानव है। उसका प्रेम भी पशु प्रेम है, जो वासना की दुर्गन्ध से परिपूर्ण है। इन्द्रमोहन कपट़ से निरंजना को होट़ल मे ले जाता है। वहाँ पहुँचकर वह बलपूर्वक उसके साथ संभोग करने का प्रयत्न करता है। निरंजना के गुरुजी की कोठ़ी पर भाग जाने पर वह गुरुजी को अपना प्रतिद्वन्द्वी समझकर उन्हें गोलीमार देता है, किन्तु गुरुजी के बच जाने पर निराश भी नहीं होता ।

इन्द्रमोहन किसी भी प्रकार निरंजना को प्राप्त करने की कोशिश करता रहता है। यहाँ तक कि विवाह भी इसी लिए करता है कि चरित्र में आई गंभीरता से प्रभावित होकर निरंजना उन्मत्त हो उठे़, उसे पाने को व्याकुल हो उठे़। अपनी चरित्रगत मानसिकता वह स्वयं बताता है–

''तो सुनिए। मैनें विवाह केवल इस आशा से नहीं किया है कि इस बात से आपके मन पर मेरे सम्बन्ध में अच्छी धारणा जम जायेगी। मेरे भीतर जो एक आवारागर्दी का भाव मुझे सब समय शैतान की कलाबाजियों के चक्कर में डाले रखता था; उससे मुक्ति पाकर मैं अपना स्थिर, गंभीर रूप आपके सामने रखना चाहता था। वह स्थिरता मुझे केवल विवाहित जीवन से ही प्राप्त हो सकती थी। मैं अपने अज्ञात में यह आशा रखता था कि जीवन के किसी चरम अवसर पर कहीं न कहीं फ़िर एक बार आपसे भेंट होगी। उस महत्वपूर्ण मिलन की तैयारी के उद्देश्य से ही मैं अपने जीवन का गठ़न एक विशेष आदर्श के अनुसार करने पर तुला हुआ था। मेरे लिए विवाह की यही सार्थकता थी।''[३३]

(३) प्रेत और छाया :– पारसनाथ

प्रेत और छाया का नायक पारसनाथ एम. ए. तक की शिक्षा पाने पर भी गुरु गंभीर ज्ञान का तिरस्कार कर, कुछ कंठाओं में ग्रस्त होकर हमारे समक्ष होता है। धन से दीन, भावों से हीन और कृत्यों से विकृत क्यों बना ? इसके कारण हैं– परिवार, समाज और संसार। परिवार में पिता द्वारा अभिशप्त, शिष्ट समाज द्वारा बहिष्कृत और संसार द्वारा तिरस्कार पाकर वह युवक क्षणिक आवेश में बह जाता है और भावुकता में खो जाता है।

मंजरी के संपर्क में उसके भावुकता पूर्व व्यवहार पर विश्लेषणात्मक मनन करते हुए स्वयं इलाचन्द्रजी कहते हैं कि– ''पारसनाथ को अपनी भावुकता पर स्वयं आश्चर्य हो रहा था। नशे का अनुभव वह इसके पहले कई बार कर चुका था, पर नशा चाहे कैसा गहरा क्यों न हुआ हो, इस प्रकार की भाव प्रणवता उसमें इसके पहले कभी किसी भी हालत में नहीं आई थी। जीवन के प्रति बराबर एक व्यंग्यपूर्ण हिंसात्मक दृष्टिकोण उसका रहा था, और हर प्रकार की भावुकता को वह ओछे, छिछले और हीन प्रकृतियों की विशेषता समझता था। तिस पर किसी स्त्री के आगे आवेश में आना तो उसकी दृष्टि में हीनता की परम सीमा थी। इसलिए आज का अनुभव उसके लिए एकदम नया था।''[३४]

पारसनाथ इड़िपस ग्रंथि से पीड़ित है। उसके अज्ञात मन में यह बात पैठ गई है कि उसकी माँ कुल्टा थी– यह बात उसके पिताने उपन्यास के आरंभ में उससे कहीं और इस ढंग से कही कि सीधे उसके अचेतन मन में घूस गई– इससे उसकी मानसिक दशा विकृत हो उठी, मस्तिष्क भन्ना उठा। काफ़ी देर तक तो उसका स्वच्छ, स्वस्थ मन इस रहस्य को स्वीकार करने से इनकार करता रहा। वह सोचता रहा, किन्तु ज्यों–ज्यों उस गिद्ध तुल्य पिता का रूप उसके स्मृति पट़ल पर आता गया, वह रह–रह कर यह मानने पर विवश होता– सोचता कि–निश्चय ही यह बात है– यह नराधम घृणित मानव कदापि मेरा पिता नहीं हो सकता। मेरा इसका क्या साम्य ? न रूप में न रंग में, न भाव में न विचार में। किसी भी तरह उसे पिता के रूप में स्वीकार करने के लिए उसका मस्तिष्क तैयार न हुआ। फ्रायड़ के अनुसार यह इड़िपस ग्रंथि है जो नितांत बालक का उसके माता–पिता से संघर्ष करती है। पारसनाथ अपने पिता को 'तिब्बती दानव' के रूप में देखता है और भयभीत होकर भाग जाता है। उसका हृदय प्रतिहिंसा एवं प्रतिशोध की भावना से भर उठ़ता है। अंत में उसकी दमित वासना नाना रूप धारण कर नृत्य करने को मचल उठ़ती है। पारसनाथ में इड़िपस ग्रंथि के बाद हीनताग्रंथि भी है। हीनताग्रंथि के कारण ही उसकी क्षतिपूर्ति के प्रयास में जिन–जिन स्त्रियों से वह सम्बन्ध स्थापित करता है, उन्हें पीड़ा पहुँचाकर सुख की अनुभूति करता है। वह किसी भी स्त्री से स्थायी संपर्क करना नहीं चाहता है। यदि किसी से विवाह हो जाने की नौबत आ भी जाती है तो वह चुपचाप वहाँ से भाग निकलता है। अपनी माँ के कुचरित्र की कल्पना से उसके प्रति जो उत्कृष्ट घृणा का भाव उसके मन में भर गया था। फलतः समस्त नारी जाति को घृणा करने लगता है–

''मैं नारी मात्र से उत्पन्न घृणा करता आया हूँ, और उसे सैकड़ो डंक, हजारों तीखे पंजे और लाखों विषैले कीटाणुओं से युक्त एक घोर घातक और हिंसक जीव के बतौर देखता आया हूँ।''[३४] जिस विकृत प्रति हिंसा की भावना से उसकी आत्मा ग्रस्त हो गयी थी, वहीं अनजाने में उसे आत्महत्या से विरतकर जीने के लिए प्रेरणा देती रहती है।

प्रेम के क्षेत्र में वासना के अलावा और कोई जिम्मेदारी पारसनाथ स्वीकार करने के लिए कतई तैयार नहीं है। उसमें औचित्य–स्थापन की प्रक्रिया भी सक्रिय है। जैसे– ''नारी का यह अनंतकाल व्यापी स्नेह–बन्धन स्वीकार करे, वे लोग, जिन्हें समाज का सम्मान और वैभव का वरदान प्राप्त हो, पर मेरे जैसे प्रेत लोक में निर्वासित भगोड़े किसी भी हालत में इस प्रकार के बन्धन को अधिक समय तक मानकर नहीं चलते।[३५]''

पारसनाथ को स्त्री जाति के प्रति घृणा हो जाती है। वह समस्त स्त्री जाति को बरबाद करने पर तुल जाता है। क्योंकि उसके अवचेतन मन में स्त्री के प्रति नफ़रत ही है। वह कल्पना करता है कि– सारी नारी जाति एक विराट अग्नि सागर में डूबकर विनिष्ट हो जायें और उसका अस्तित्व कहीं किसी भी रूप में न रहे। अतः उसमें विचित्र कल्पना भी मौजूद है, जो फ्रायड़ द्वारा प्रतिपादित की गई हैं।

पारसनाथ घोर व्यक्तिवादी नायक है। अपने स्वार्थ में लीन है, अपने अहं में डूबा है। अपने हित तक ही सोचता है और वही करता है। संपूर्ण समाज के प्रति विद्रोह का विचार रखता है। वह उसे फूँक मारकर उड़ा देना चाहता है। उसके द्वारा पग–पग पर तिरस्कार पाकर उससे प्रतिशोध लेना चाहता है, और लेता भी है। किन्तु यह बदला वह समाज के नारी वर्ग से लेता है। उसे वह अपनी क्रोधाग्नि का शिकार बनाता है। नारी मात्र का सौन्दर्य यौवन और जीवन उसके व्यक्तिवादी शरों के शिकार हैं जिन्हें वह जी भर कर रौंदता है, घसीट़ता है और घसीट़कर छोड़ भागता है।

पारसनाथ के चरित्र में अहं भी अलग प्रकार का है, जिसकी तुष्टि नारी मात्र के सतीत्व के हनन से ही होती है। नारी भी वही जो सती हो, पतिव्रता हो। उसकी इस वृत्ति का उद्‌घाटन स्वयं नंदिनी करती है–

''एक कुलीन घराने की विवाहिता स्त्री को भगाकर उसका धर्म भ्रष्ट करने में तुम जैसे पुरुषों को सुख मिलता है वह किसी वेश्या समाज की लड़की को (फिर वह चाहे विवाहिता क्यों न हो) भगाने में कहाँ

मिल सकता है ? आज मैं अच्छी तरह समझ गई हूँ कि तुम सचमुच नरक के कीड़े हो, उस नरक के भीतर कुलमुलाते रहने में ही तुम्हें सुख मिलता है। घोर विकृत और गलित सुख ?''[३६] पारसनाथ में तीव्र मानसिक अन्तर्द्वन्द्व है। अपनी अंतरात्मा की इस आवाज को वह वर्षों से प्रतिदिन, प्रतिपल, भरसक दबाने की चेष्टा करता रहता था कि समाज ने उसके साथ कोई खास शत्रुता नहीं की है, बल्कि उल्टे उसी ने पग–पग पर समाज की पीठ पर छूरे से आघात किया है।''[३७] वह स्वयं भी सुखी नहीं रहता और न अपने संपर्क में आनेवालों को सुखी रख पाता है। अपने प्रायः सभी कार्यों में निहित अनैतिकता एवं बर्बरता के बारे में पारसनाथ का चेतन मन अच्छी तरह जानता है। अपनी विकृतियों के बावजूद भी पारसनाथ में अपने सहज संस्कार के कण विद्यमान हैं। यह कारण है कि घोर विवशता में आ पड़ी मंजरी को हर संभव सहायता देने में वह किसी बात की कमी नहीं रखता है। किन्तु अपने मन में दबी अचेतन ग्रंथि के कारण ही वह अपने इन कृत्यों पर नियंत्रण नहीं कर पाता। अतः अपने सहज स्वाभाविक व्यक्तित्व से वह युवतियों से घनिष्ठता एवं स्वाभाविक प्रेम सम्बन्ध स्थापित करता है और उनके दूषकृत्य पर नियंत्रण नहीं कर पाता। मंजरी के बच्चे के प्रति भी वह कभी–कभी पितृ–स्नेह का अनुभव करता है, तो कभी वह पीड़न वृत्ति से यह इच्छा करने लगता है कि बच्चा जल्दी से जल्दी मर जाय। पारसनाथ के इस चेतन–अचेतन संघर्ष को इलाचन्द्रजी ने पूर्ण सफलता के साथ चित्रित किया है। अंत में पिता द्वारा अपनी माँ का वर्णन सुनकर पारसनाथ में दिन–रात का फर्क हो जाता है। उसका एक नया ही रूप उभरने लगता है और वह हीरा का आदर्श पति बन जाता है। वह अंत में दानव से दानी बन जाता है, और अपने एवं समाज के उद्धार में पूरी तन्मयता से लग जाता है।

(४) निर्वासित : महीप (कुंठित महिप)

महीप को हम निर्विवाद रूप से उपन्यास का परम आकर्षक चरित्र मान सकते है, ठाकुर लक्ष्मीनारायणसिंह इस उपन्यास में खलनायक सिद्ध होता हैं।

महीप एक अंतर्मुखी प्राणी है, जो अच्छा विचारक, भावुक और अंतर्दशक भी। महीप काव्य प्रेमी भी है। वास्तविकता से परे कल्पना और आदर्श के लोक में वास करनेवाला वह जीव जीवन की यथार्थ चट्टानों से टकराकर प्राण तक खो बैठ़ता है, किन्तु अपने आदर्शों से ड़िगता नहीं है। हाँ, सिद्धांतो में परिवर्तन अवश्य लाता है, हिंसक प्रवृत्ति को त्यागकर अहिंसा का पुजारी बन जाता है।

शारदादेवी के आगे वह अपना हृदय खोलता है– ''मैं सचमुच इधर किन्हीं कारणों से इतना अधिक आत्मगत रहा हूँ कि अपने अकेलेपन के बोझ को संभालने के सिवा और चिन्ता ही मुझे नहीं रही है। अत: आप निश्चिय ही अपने प्रति मेरी उदासीनता के लिए मुझे क्षमा कर देगी।''[३८]

महीप आत्म पीड़ित दिखायी पड़ता है। वह हीनता ग्रंथि का शिकार बना हुआ है।– ''मेरे शरीर का लघु आकार मुझे बराबर क्रौंचता रहा है उसके कारण एक तीव्र आत्मग्लानि की अनुभूति निरंतर, प्रतिदिन प्रतिपल मुझे पीड़ित करती रही है। अपनी हीनता की इस अनुभूति के कारण मैं घोर आत्मकामी और आत्मलीन बन गया था।''[३९] अपने बौने रूप एवं दुर्बल शरीर से वह एक वयस्क शिशु ही दिखता है। महीप के स्वभाव के कारण ही नीलिमा और प्रतिमा ने महीप से आत्मीयता प्राप्त की थी किन्तु वह भी अलग हो जाती है। जैसे– ''जिन दो और नारियों की आत्मीयता उसने किसी हद तक प्राप्त की थी, उन्हें भी उसने अपने स्वभाव की अनिश्चियात्मकता और असामंजस्य के कारण अलग कर दिया।[४०]''

(५) मुक्तिपथ : अतिमानुषी राजीव :

राजीव 'मुक्तिपथ' का नायक हैं बहिर्मुखी होने के कारण वह वास्तविक जगत का साक्षात्कार करता है। यौवन के प्रथम चरण में पदार्पण कर जहाँ उसमें सरल भावुकता यौवनानुकूल चंचलता देख सकते हैं। वहाँ प्रौढावस्था में हम गंभीरता एवं धैर्य धारणा के दर्शन कर पाते हैं।

आत्मविश्लेषण करने पर वह अपने को निपट निस्सहाय और निकम्मा पाता है। राजनीतिक

कुचक्रों से भली–भाँति परिचित राजीव पारिवारिक जीवन की दिनचर्या और द्वन्द्वचक्र के भीतर अपने को सर्वथा असमर्थ अनुभव करता है। वह मन ही मन सोचता है– ''तुम यह क्यों भूल गये हो कि सुनंदा विधवा है, और किसी भी भारतीय विधवा के लिए यह अत्यंत अनुचित है कि वह किसी भी पुरुष के साथ एकान्त में बाते करे यह ठीक है ? भाभीजी के क्रोध के कारण मेरा ठहाका मारना उतना गलत नहीं है, जितना यह है कि मैंने एक विधवा युवती से आधी रात के सन्नाटे में बाते की हैं।[४१]

अपने को अनाथ, आश्रय हीन एवं विपन्न समझकर राजीव के मन में हीनताग्रंथि घर कर जाती है। वह अपने को असफल मानता है और उससे मुक्ति पाने के लिए छटपटाता रहता है। ऐसा स्पष्ट लगता है। सुनन्दा से प्रभावित राजीव दमित काम भावनाओं के रंगो में रंगा हो किन्तु राजीव सुनन्दा के कर्मनिष्ठ जीवन से उसके अधिकाधिक निकट पहुँच जाता है, उसका उद्देश्य भी सुनन्दा के ऊपर छाई अदम्य शक्ति का व्यापक उपयोग करने में है। राजीव के अचेतन काम की भावना उसके मन की हीनता ग्रंथि में दब जाती है। वह स्वयं विश्लेषण करता है कि–

''श्रम की प्रवृत्ति स्वभावतः कोई प्रिय प्रवृत्ति नहीं थी, पर महत् जीवन के निर्माण में उसकी परम उपयोगिता समझकर ही मानव उस श्रेय पथ को अपनाता आया है और उस श्रेय पथ में चलने में भी विशेष सुख है, जिसका स्वाद कुछ बिरले ही सौभाग्यशाली लोगों को मिल पाता है। मैं स्वाद पा चुका हूँ, इसलिए किसी दूसरे सुख की कल्पना ही मेरे मन में नहीं उठ पाती।''[४२]

जीवन की उलझनों एवं द्वन्द्वों से राजीव अन्तर्मुखी होने के बजाय बहिर्मुखी होकर समाज के साथ संपर्क स्थापित करता है और समाज का ही चिंतन–मनन करता है। राजीव हंमेशा आशावादी रहता है। उसका पुराना मित्र आश्चर्य से कहता है– ''मैंने जितने भी क्रांतिकारियों को कारावास से मुक्त होने के बाद देखा है, सब के स्वभाव में एक गहरी निराशा, जीवन रूपी अवसाद, पराजय की भावना और चिड़चिड़ापन पाया है। पर तुम (राजीव) तो ऐसे तरो–ताजा होकर निकलते हो जैसे किसी कठोर निर्वासन

से नहीं बल्कि ससुराल से लौटे हो।''[४३] उसका स्वप्न केवल यही था निर्जीव समाज को कुछ नया दे, उसकी साधना भंग नहीं हुई है। जब कृष्णादेवी राजीव पर दोषारोपण करती है तो उमाप्रसाद समझाता है कि– ''उसके समान सुशील और सच्चरित्र मैंने आजतक दूसरा कोई नहीं देखा। उसके दृष्टिकोण से कोई सहमत हो या न हो पर उसके दृष्टिकोण की सच्चाई और उसके आत्म बलिदान की लगन पर किसी जानवर को संदेह नहीं हो सकता। ऐसे होते हैं क्रांतिकारी और उनमें राजीव तो हीरा है।''[४४]

इलाचन्द्र जोशीने 'निर्वासित' और 'मुक्तपथ' के नायक में ज्यादातर क्रांति से संबंधित यथार्थवादी वर्णन ज्यादा किया है। मनोवैज्ञानिकता का तो स्वमात्र नहीं मिलता हैं।

(६) जिप्सी (त्याग का भोग, मणिमाला) :

मनमौजी नृपेन्द्ररंजन :

नृपेन्द्र रंजन उपन्यास का नायक है। वह बुलंद शहर का रहनेवाला उच्चवर्ग में उत्पन्न एक मनमौजी जमींदार है । उसका आरंभिक रूप जमींदार का हैं। किन्तु मनिया के रूप के अतिरिक्त उनकी दीन–हीन दशा देखकर भी उसके प्रति आकर्षित हुआ। और यह आकर्षण इतना प्रबल हुआ कि अपने और मनिया के बीच किसी तीसरे की उपस्थिति को अथवा उसके किसी प्रकार के व्यंग्य को सहन नहीं कर सकता। क्रोध और उत्तेजना, प्रेम और घृणा सभी इसके चरित्र की सहज प्रवृत्तियाँ हैं। रंजन पूंजीवादी वर्ग का प्रतिनिधित्व नहीं करता है। नृपेन्द्ररंजन बहुनारीगामी भी नहीं है। अगर वह चाहता तो अनेक जिप्सी बालाओं के नारीत्व को रौंद डालता किन्तु वह ऐसा नहीं करता हैं। उसका प्रेम केवल दो स्त्रियाँ मनिया और शोभना तक ही सीमित रह जाता है।

मनिया से सहज प्रेम प्राप्ति के अभाव में नृपेन्द्र रंजन **कुंठित** है वह अपनी उन्मुक्त कामनाओं से भी पीड़ित है। दमित कामग्रंथियाँ सक्रिय होने पर भी वह अपने भावों को नियंत्रित रखता है । वह चेतन

रूप से मनिया से वास्तविक प्रेम करता है, पर उनमुक्त कामनाओं के कारण अचेतन रुप से शोभना का संपर्क चाहता है। किन्तु मनिया से रंजन के प्रेम का मूल कारण उसका अतिशय रूप लावण्य ही था। नृपेन्द्र, मनिया को पाने के लिए **सम्मोहन** की चाल चलकर उसे अपने वश में कहते हुए अपने आचरण का औचित्य स्थापित–इन शब्दों में करता है– ''मैंने केवल इस उद्देश्य से मनिया को अपने वश में करने का प्रयास नहीं किया है कि वह मेरी आत्मतृष्टि के लिए मुझसे प्रेम करें, बल्कि इसलिए कि मैं उसके भट्के हुए, जीवन संघर्ष में पिसे हुए और पारिवारिक दुर्बलताओं की ग्लानि से पीड़ित मन को ठीक रास्ते पर लाना चाहता हूँ।''[४५] अन्यत्र नृपेन्द्र रंजन मनिया को सम्मोहन दौरान अपने वश में करना चाहता है किन्तु मनिया इस बार उसके वश में नहीं होती, तब नृपेन्द्र की मानसिक स्थिति डाँवाडोल हो जाती है, वह मनिया से सच्चा प्रेम करता है, और उसके समक्ष स्नेह प्रदर्शन की आतुरता व्यक्त करता है। जोशीजीने इन भावों का प्रभावशाली वर्णन किया है–

''देखो मनिया अब तुम कहीं नहीं जा सकती.....तुम्हारा मन इस समय से एकदम मेरे वश में हो चुका है, यह जान लो ! मैं तुमसे जैसा करने को कहूँगा वैसे तुम्हे करना होगा।'' किन्तु उसके इस हिप्नोटिक आदेश को मनियाने अट्टहास्य के साथ ठुकरा दिया। इसका कारण नृपेन्द्र स्वयं को मानता है कि मैंने मनिया की मंगल कामना के लिए नहीं, बल्कि अपने स्वार्थ के लिए उसे संम्मोहित किया है। इसीलिए सफल नहीं हुआ हूँ। अगर मनिया को इस बात का पता चल गया है तो अच्छी बात है। एक न एक दिन पता चलना ही था। आज मैं निश्चिंत हो गया हूँ। मैं अपने को पूर्णत: उसी की दया पर छोड़ दूँ। दाता के तीन गुण दे, न दे, छीन ले। इन तीनों में से किसी भी स्थिति को स्वीकार करने के लिए मुझे तैयार रहना चाहिए। तभी मैं अपने भीतर की अपराध भावना के बोझ से छुटकारा पा सकता हूँ। ठीक है, कल ही तो मैं मनिया से क्षमा माँगता हुआ उसके चरणों में आत्म समर्पण करूँगा।''[४६]

जब मनिया का मुख–मंडल तेजाब से जलकर विकृत हो जाता है तो उसका अचेतन मन उसको

घृणा करने लगता है। पर उसका चेतन मन उसे चाहता है। जब मनिया नृपेन्द्र को छोड़कर चली जाती है तो नृपेन्द्र का मन कराह उठ़ता है। जैसे– ''मुझे लग रहा था जैसे मेरे शरीर का अंग ही कटकर अलग हो गया हो। यह ठीक है कि वह अंग जलकर निकम्मा हो गया था और मेरी विवशता की याद दिलाने और बदसूरती बढ़ाने के अतिरिक्त मेरे और किसी काम का नहीं रह गया था, पर सब कुछ होने पर भी वह था ही मेरा अंग ही उससे छिन्न हो जाने की पीड़ा किसी भी हालत में उपेक्षणीय नहीं हो सकती थी।''[४७]

नृपेन्द्र का मन हंमेशा द्वन्द्वग्रस्त रहा हैं। और इसी बजह से वह किसी भी बात पर सही निर्णय नहीं ले पाता है। अपने दुर्बल मन के कारण यह कभी–कभी संकोच का अनुभव करता है। अकाल एवं महामारी से लोगों की मृत्यु देखकर उसका भावुक हृदय पिघल जाता हैं और वह लोगों की सेवा के लिए तैयार हो जाता है।

नृपेन्द्र रंजन के नैतिक पतन के लिए तीन महत्वपूर्ण बातें हमारे सामने आती है। मनिया की कुरूपता के साथ–साथ स्वभावगत परिवर्तन, वीरेन्द्र की मृत्यु और शोभना की अकपट़ सेवा तथा बिखरी हुई स्थिति उसे स्वस्थ कर देती है। किंतु शारीरिक स्वस्थता पाकर मानसिक रूप से अस्वस्थ हो जाना उसके पतन की प्रथम सीढ़ी है। हुगली की कोठ़ी में सुरा और सुन्दरी का भोग करते करते जब उसका मन थक जाता है तो एक बार फिर वह जन सेवा के लिए लालायित हो उठता है। कहीं–कहीं नैतिक बल का भी उसमें अभाव दिखता है। वह डट़कर शोभना का विरोध नहीं कर पाता, मनिया को जाने से नहीं रोक पाता। चाहे रूप से वशीभूत होकर समझिये चाहे कुछ और। उपन्यास के अन्त में आश्रम में जाकर कुदाली पकड़कर काम करना उसके महान व्यक्तित्व का परिचायक रूप है। उसमें व्यक्ति इस कदर डूब जाता हैं कि अपने अहं से ऊपर नहीं उठ़ पाता और करुणा की सहज और उदार मानवीय भावना को आत्म करुणा में सीमित कर देता है या तो फिर अपनी उस भावुकता को कृत्रिम नैतिक उपायों से फूलाकर वास्तविकता से कोई सम्बन्ध नहीं रखता।

(७) जहाज का पंछी :– 'विलक्षण नायक'

यह सभ्यता नहीं, असभ्यता है, मानवता नहीं दानवता है। जहाँ व्यक्ति के ऊपरी रुप से उसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया जाता है। उसके अचेतन मन को ध्यान में न लेकर, चेतन मन–व्यवहार केन्द्रित होकर उस पर सन्देह और अविश्वास दिखाया जाता है। आश्रय हीन, जीर्णकाय किन्तु उदारचित्त और सत्यनिष्ठ मानव को व्यंग्य और घृणा की दृष्टि से देखा जाता है। विभिन्न मनोवैज्ञानिक सिद्धांतो के मद्दे नजर 'जहाज का पंछी' नामक उपन्यास के नायक का विश्लेषण अपेक्षित होगा।

'जहाज का पंछी' उपन्यास 'मैं' शैली में लिखा गया उपन्यास है। इलाचन्द्र जोशीने कहीं भी नायक के नाम का उल्लेख नहीं किया है। किन्तु एक स्थान पर पुलिसवाले के आगे नायक अपना नाम 'भगत' बताता है।''[४८] यह स्पष्ट है कि वह व्यंग्य से अपना नाम भगत बताता है। नायक विद्या संपन्न है फिर भी रोजगारी के लिए भटकता रहता है।

जीवन की असफलताओं के कारण नायक को अपनी भावनाओं का दमन करना पड़ता है और इसलिए उसका मन कुंठित है और अहम् विकृत हो गया है। बचपन से ही वह स्नेह से वंचित रहा है। वह अपना दुर्भाग्य लीला के आगे व्यक्त करता है– ''मैंने चिर जीवन किसी का भी आन्तरिक स्नेह नहीं पाया। आज, जाने क्यों पहली बार मुझे सोचने की इच्छा होती है कि जिन लोगों ने जीवन में कभी एक दिन के लिए भी माँ का, या बहन का, या भाभी का मंगलमय स्नेहाशीर्वाद पाया है, वे कैसे भाग्यवान हैं।''[४९] नायक आवारा होते हुए भी यदि कुछ पैसे किसी तरह उसके हाथ लगे तो वह उसे बोझ समझकर या तो खर्च कर डालता है या आंतरिक सहानुभूति एवं अत्यंत उदारता का परिचय देते हुए किसी की सहायता करता है। वह स्वयं अनुभव करता है– ''जब कभी दस पाँच से अधिक रकम मुझे कहीं से प्राप्त होती, तब मेरे मन में एक भय की–सी भावना सामने आने लगती थी। जब तक पूरे का पूरा खर्च न हो जाता तब तक चैन नहीं मिलता था।''[५०] 'जहाज का पंछी का नायक हंमेशा किसी न किसी चिंता में ही रहता है– ''केवल मात्र

चिंता , चाहे वह विश्व कल्याण की ही क्यों न हो, यह एक मानसिक बीमारी है और इधर कुछ समय से मैं अपने को इसी बीमारी का शिकार पाता हूँ।''[५१] यही वजह है कि उसका स्वभाव और आदतें विचित्र लगती है।

नायक अहमी भी है। तभी तो वह भूख से बेहाल हो जाने पर भी अपने अहं के कारण ही किसी से याचना नहीं करता हैं। नायक में अन्तर्द्वन्द्व चलता रहता है। जब वह एक पुस्तक विक्रेता की पुस्तकों का निरीक्षण कर रहा था तो उसका अस्तव्यस्त बाह्य रूप देखकर उसे यहाँ से चले जाने के लिए भी कहता है। अपने अहं के कारण ही वह अपने पाँच रुपये में से चार रुपये की किताब खरीदता है। लीला के साथ महिला मंडल की मिटींग में भी वह द्वन्द्व से कतराता रहता है और अंत में अपने अहं की रक्षा के लिए ही वह लीला को छोड़कर चला जाता है। यह नायक आत्मग्लानि से भी भर जाता है क्योंकि जब बेला नायक के साथ भाग जाती है तो सोचता है कि इस विशाल संसार में मेरा कोई नहीं है। वह उसको लेकर कहाँ जाय? वह आत्मग्लानि से अपने आपको कोसता है। जैसे– ''तुम पुरुषार्थहीन हो ! नपुंसक हो ! कायर हो! बड़ी–बड़ी बातें सोचते हो..... तो क्या एक अदनी सी असहाय नारी आत्मा का उद्धार नहीं कर सकते।''[५२]

नायक बौद्धिक चेतना से युक्त है। वह किसी भी परिस्थिति से निपट़ने के लिए मानसिक तौर पर तैयार रहता है। वह अपनी सूक्ष्म अंतर्दृष्टि से छोटी़–छोटी़ घट़नाओं का विश्लेषण स्वयं करता है। वह आशावादी भी है– ''अपनी चरम दुर्गति की परिस्थिति में भी जब मैं भूखा रहकर पार्कों या फूटपाथो पर रातें बिता रहा था। तब मेरे ऊपरी मन में भी मन के नीचे आशा की चिनगारियाँ विद्यमान थी, बुझ नहीं गई थी।''[५३]

(८) 'ऋतुचक्र ': चिंतनशील दादा :

'ऋतुचक्र' उपन्यास का केन्द्रीय पात्र है दादा। दादा का मूल नाम बताया है– मिलनकुमार

चट्टोपाध्याय दादा ने यौवन में पैर रखते ही स्नेह से हाथ धो दिये, इतना ही नहीं झूठे लांछनों का भी सामना किया। अपनी इमानदारी के बदले में उसे घोर भर्त्सना मिली। वह अपने बलबूते पर ही आगे बढ़े। आघेड़ उम्र तक वह अविवाहित रहे। संपूर्ण जीवन में आशावादी दिखते दादा कुंठाग्रस्त नहीं है बल्कि चिंतनशील हैं। अपने अनुभव के आधार पर ही दूसरे पात्रों का मनोविश्लेषण दादाने किया है।

दादा अत्यंत संवेदनशील व्यक्ति है। गिड़वानी की हत्या का संवाद सुनकर वह इतना बैचेन एवं परेशान हो उठ़ता है कि वह केवल शरीर की ही नहीं बल्कि प्राणों की भी थकान अनुभव करने लगता है। चित्रा ही आत्महत्या के समाचार सुनकर उन्हें इतना आघात लगता है कि मानों उसके सिर पर गाज गिरी हो। जब उनको पता चलता है कि माणिकलाल एक असामान्य व्यक्ति है, तो वह लीली के भविष्य से उत्कंठित रहता है। लीली के गर्भवती होने के समाचार सुनकर उनको मानसिक चोट लगती है, जैसे लीली उनकी सगी बेटी हो।

दादा अपने आनंद की अनुभूति के लिए और एकाकी जीवन से त्रस्त होकर विश्वविद्यालय से अध्यापक की नौकरी से इस्तीफा दे देते हैं। ऐसा करके वह प्रकृति का आनंद लेना चाहते हैं– ''केवल जीने के लिए नहीं बल्कि उत्सुकता भरे उल्लास के सुख का अनुभव प्राप्त करने के लिए, अपने अकेलेपन के भय से सिकुड–सिमट़कर नहीं, बल्कि उत्सुकता भरे उल्लास के साथ जीवन के सहज आनंद की अनुभूति को पकड़ने के लिए।''[५४] प्रतिभा से परिचित होने पर भी दादा बोल उठ़ते हैं– ''मेरे मन में यह विश्वास जमने लगा है कि मनुष्य जन्म से आगे बढ़ता हुआ हर उम्र में जिन अनुभूतियों से होकर गुजरता है और फिर उन्हें भी पार करता चला जाता है, ये बाद में दूसरी उम्र की दूसरी अनुभूतियों और परिस्थितियों के बीच कहीं खो जाती हैं। वे हमारे भीतर के किसी अनजाने कोष में उसी रूप में सुरक्षित रहती है, उनमें तनिक भी विकार नहीं आता ।''[५५] दादा यह स्थापित करना चाहते हैं कि रोमांस या प्रेम के लिए कोई निश्चित उम्र की आवश्यकता नहीं है।

''प्रतिभा से घनिष्ठता बढ़ते–बढ़ते दादा के अचेतन मन में वर्षों से दबी पड़ी अभुक्त कामवासना जागृत हो उठ़ती है और एक दिन दोनो में परस्पर आत्मसमर्पण हो जाता है। दोनों की ढलती उम्र होने से दादा के मन में यह द्वन्द्व चलता रहता है विधिवत विवाह से पहले का यह सम्बन्ध उचित है या अनुचित जोशीजीने एक स्वप्न के माध्यम से दादा की मानसिक स्थिति को व्यक्त किया है।''[५६] स्वप्न में दादा देखते है कि वह माणिकलाल को डाँट बताते हुए कहता है कि उसने एक सुन्दर और मासूम लड़की के सारे भविष्य को नष्ट कर डाला है। पर माणिकलाल तो व्यंग्य एवं घृणाभरी दृष्टि से उसकी ओर देख रहा था। स्वप्न का कारण यह है कि दादा अच्छी तरह से जानता है कि माणिकलाल का लिली से अनैतिक सम्बन्ध है, पर उसे अब क्या अधिकार है, माणिक लाल को डाँटने का ? उसका नैतिक मन बीच–बीच में उसे धिक्कारता है कि उसने भी घूर्त माणिकलाल की तरह अनुचित कार्य किया है। पर दादा माणिकलाल की तरह खुदगर्जी और प्रतिभा से विश्वासघात नहीं करना चाहते। तभी तो वह जल्द से जल्द प्रतिभा से विवाह करने की बात करता है। अपने तिरपन साल की अविवाहित अवस्था के बाद वह मान लेता है कि– ''स्त्री पुरुष का शारीरिक मिलन प्रतिदिन के जीवन की ठ़ोस वास्तविकता है। उसकी न तो अवज्ञा की जा सकती है और न निराकरण। उससे घृणा करना मूल जीवन से घृणा करना है और जीवन का मूलतत्व किसी भी हालत में घृण्य नहीं हो सकता ।''[५७] दादा का मानना है कि स्त्री–पुरुष का प्रेम सम्बन्ध मानसिक एवं आध्यात्मिक स्तर पर महत्वपूर्ण है। दादा सभी पहाड़ी व्यक्ति के लिए सन्माननीय हैं। सभी को दादा में विश्वास है, तभी तो माणिकलाल अपनी करतूतों का बयान पहले दादा के आगे रखता है और चित्रा ने भी आत्महत्या के पहले लिखा था कि अपना बचा हुआ सभी सामान दादा के हाथों सौंप दिया जाये ।

(९) भूत का भविष्य : भूतनाथ

भूतनाथ उपन्यास की धूरी है, उपन्यास के अंत में वह नायिका का प्रेम पा लेता है। वह शिक्षित है, परोपकारी, सेवानिपुण एवं संवेदनशील है। अतः भूतनाथ ही उपन्यास का नायक है। वह हीनता ग्रंथि से

ग्रस्त है। वह निम्न जाति का है अत: आत्माभिमान के साथ रहने में अपने को असमर्थ पाता है। और मुश्केलियाँ तथा तिरस्कारो से ग्रसित हो जाता है। उसके अर्न्तमन में ही हीनता ग्रंथि बँध जाती है कि मैं अस्तित्व हूँ, समाज में मेरा मान नहीं है, मेरा समाज में आना निरर्थक है।

जोशीजीने भूतनाथ को दुर्बल चरित्र के रूप में चित्रित किया है। उसे बचपन से ही समाज और जातिगत संस्कारों से ग्रस्त बताया है, और यही कारण हैं कि वह उपन्यास के अन्त में विद्रोही बन जाता है। उच्च जाति का त्रास सहन करने पर भी अपने सही पाठी राकेश और असकी प्रेयली नन्दा को आर्थिक सहाय करता है। जब कि वह जानता है कि राकेश और नन्दा उच्च जाति के हैं। अपनी जाति के प्रति बेहद लगाव के कारण ही वह अपने से निम्न जाति की लड़की से विवाह कर लेता है। तीन बच्चे होने के बाद भी वह वैवाहिक जीवन से विरक्त हो जाता है। जीवन में मुसीबतों का डटकर सामना नहीं कर पाता, और अंत में एक खंडहर मकान में भूत की तरह छिपकर शेष जीवन जीता है।

(१०) कवि की प्रेयसी :

कवि 'सौमिल्लक' या 'सोमिल' :

'कवि की प्रेयसी' का नायक सौमिल्लक है। यह उसकी आत्मकथा है। बचपन से ही वह भोला और चंचल है। दूसरे की पीड़ा को वह सह नहीं सकता और उसका मन व्यथित हो जाता है। देवी को मनाने के या प्रसन्न करने के लिए पशु की बलि चढ़ाना उसको पीड़ा पहुंचाता है और इसी पीड़ा के कारण वह अपनी इज्जा से पूछ बैठ़ता है– ''अच्छा, इज्जा ! एक बात बताओं। देवता लोग इतने निष्ठुर और घृणित क्यों होते हैं ? क्यों वे बेचारे पशुओं की बलि करवाते है ?''[५८] सोमिल बचपन से ही संवेदनशील है तभी तो वह अपनी इज्जु के भिक्षु की बात पर कह उठ़ता है कि– ''तुम चली जाओगी तो मैं शिप्रा में डूबकर या गले में फाँसी लगाकर मर जाऊँगा, इतना जाने रहो।''[५९]

सोमिल की जीवन साथिनी होने की बात प्राय: निश्चित हो जाती है, तो उसके अन्तर्मन की बातों को एक स्वप्न के माध्यम से जोशीजीने व्यक्त किया है। ''उसने स्वप्न में देखा कि एक अलबेली युवती के साथ शिप्रानदी में तैरनेवाले एक बजरे में बैठ़कर हम जा रहे हैं।''[६०] इसमें सोमिल की मानसिक आकुलता व्यक्त होती है।

सोमिल में वासनामयी लालसा नहीं है। वह इज्जा को माता के समान मानता है और इज्जा भी उसे बेट़ा समझकर वात्सल्य और स्नेह देती हैं। अत: उसके अचेतन मन में इज्जा के प्रति ममत्व है। परिणाम यह होता है कि इज्जा के जरिये शिरीषा का परिचय होता है तो उसमें भी उसे मातृत्व ही नज़र आता है। अपने मन की और स्वभाव की द्विधा का स्वयं सोमिल विश्लेषण करता है– ''किसी भी सहृदय युवती में तनिक भी आत्मीयता का आभास पाते ही मुझे तत्काल अपनी विदेशी माता की याद आ जाती है और प्रत्येक सुन्दरी और स्नेहमयी नारी का रूप मेरे अंतर में माँ के पूर्व व्यक्तित्व के रूप में सहज ही उद्‌भासित हो उठ़ता था और केवल उसी रूप में मेरा आवारा मन रम पाता था।''[६१] सोमिल का प्रत्येक नारी में मातृभाव आरोपित करना उसमें निहित मातृरति ग्रन्थि कारणभूत मानी जा सकती है, जो स्वस्थ व्यक्तित्व की परिचायक नहीं !

इलाचन्द्र जोशी के नायकों का वर्गीकरण :

उपन्यास के नायक का वर्गीकरण अनेक आधारों पर किया जाता है। किन्तु मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास के नायक की मन:स्थिति और स्वभाव के आधार पर हम निम्नांकित वर्गीकरण कर सकते हैं। इन दो स्थितियों को ध्यान में रखकर हम नायकों को वर्गीकृत करेंगे–

(१) जट़िल व्यक्तित्ववाले नायक।

(२) कुंठित नायक।

(३) अहं ग्रस्त नायक।

(४) सामान्य नायक ।

(५) असामान्य नायक ।

इलाचन्द्रजी के औपन्यासिक नायक को हम निम्नानुसार वर्गीकृत करेंगे–

जटिल व्यक्तिवाले नायक :

जिस नायक के व्यक्तित्व को समझने में पाठ़कों को अपने दिमाग पर जोर देना पड़े अथवा स्वयं पाठ़क या श्रोता को उस नायक को समझने में द्विधा होती है ऐसा नायक जटिल व्यक्तिवाला नायक कहा जाता हैं।

'लज्जा' उपन्यास में राजू का व्यक्तित्व ऐसा है। हालाँकि 'लज्जा' नायिका प्रधान उपन्यास होने से यहाँ नायक के कारण नायक की भूमिका गौण बन जाती है।

कुंठित नायक :

इस वर्ग के अंतर्गत ऐसे नायकों को रखा गया है, जो शारीरिक और मानसिक दृष्टि से पूर्ण स्वस्थ और सामान्य हैं। किन्तु जीवन के विविध क्षेत्रों में प्राप्त असफ़लता या किसी हीनता या अक्षमता के कारण उनमें कुंठा उत्पन्न होती है। उदा. के रूप में आर्थिक स्थिति को ध्यान में रखकर सामाजिक या शारीरिक स्थिति को देखते हुए व्यक्ति में कुंठा उत्पन्न होती है। कभी सफलता या असफलता पर भी कुंठा की स्थिति उत्पन्न होती है। इलाचन्द्र के नायक में निर्वासित का महीप, त्याग का भोग का नृपेन्द्र रंजन, जहाज का पंछी का विलक्षण(मैं) नायक, भूत का भविष्य का भूतनाथ कुंठाग्रस्त नायक है।

अहम्ग्रस्त नायक :

मनोवैज्ञानिकों ने अहंग्रस्त नायक के आचरण के मूल में अहम् इड, इगो और सुपर इगो को इसका

मूल कारण माना है। इन तीनों में जब शारीरिक अथवा मानसिक कारणों से संतुलन, विच्छिन्न हो जाता है तो व्यक्ति असाधारण हो जाता है। कभी–कभी वैयक्तिक भिन्नता के कारण ही कुछ व्यक्तियों में अहम् विकसित और प्रबल होता है। 'संन्यासी का नंदकिशोर', 'पर्दे की रानी का इन्द्रमोहन' 'प्रेत और छाया' का पारसनाथ ऐसे नायक हैं।

सामान्य नायक :

जिनमें कोई कुंठा, मनोरोग या विकृति नहीं है, ऐसे नायक को सामान्य नायक कहते हैं। ऋतुचक्र में 'दादा' और कवि की प्रेयसी में 'सोमिल' ऐसे नायक हैं।

असामान्य नायक :

जिसमें कोई कुंठा, मनोरोग या विकृति हो, हीन भावना की ग्रंथि हो और व्यवहार का असंतुलन हो ऐसे नायक को असामान्य नायक कहते हैं। 'संन्यासी का नंदकिशोर', 'निर्वासित का महीप', मुक्तिपथ का राजीव और 'जहाज का पंछी' का 'मैं' नायक ऐसे नायक हैं।

निष्कर्ष :

आगे निर्देश दिया ही है कि जोशीजी के प्रारंभिक के दोनों उपन्यासों के नायक को शुद्ध मनोवैज्ञानिक आधार पर मूल्यांकित नहीं किया जा सकता है, किंतु परवर्ती उपन्यास 'पर्दे की रानी' से लेकर 'जहाज का पंछी' के नायक मनोवैज्ञानिक धरातल पर खरे उतरते पाये जाते हैं। किन्तु अंतिम उपन्यास 'ऋतुचक्र' का दादा', 'भूत का भविष्य का भूतनाथ' और 'कवि की प्रेयसी का सोमिल' व्यावहारिक स्तर पर परखे जाने पर सामाजिक उपन्यासों के नायक अधिक और मनोवैज्ञानिक धरातल पर कम खरे उतर पाये हैं। किंतु अधिकांश उपन्यासों के नायक मनोवैज्ञानिक धरातल पर ही निर्मित हुए लगते हैं। कारण भी स्पष्ट है जोशीजी स्वयं मनोवैज्ञानिक कलाकार थे और उनका उद्देश्य परंपरागत धीरोदात्त आदि नायकों का निर्माण नहीं बल्कि मानवीय दुर्बलताओं से युक्त नायक की सृष्टि करना रहा है।

आलोंचको ने निर्वासित के नायक महीप को दुर्बल और अस्तित्वहीन प्राणी कहा है। और कुछ एक समीक्षक को तो मेरे सभी उपन्यासों के नायक उत्तरोत्तर कमजोर ही दृष्टिगत हुए हैं। इस प्रति क्रिया पर स्वयं इलाचन्द्र जोशीने कहा है–

''मैं यह अस्वीकार नहीं करता कि मेरे अधिकांश कथा नायक दुर्बल स्वभाववाले हैं, वे दुर्बल स्वभाववाले हैं, इसलिए तो वे मेरे उपन्यासों के प्रधान पात्र हैं और यही मेरे उपन्यासों की सबसे बड़ी विशेषता है...। यदि पूर्वोक्त सभी महान लेखकों की रचनाओं को अध्ययनपूर्वक पढ़ने की सुविधन भी प्राप्त हो तो कम से कम शरत के उपन्यासों को सबने पढ़ा ही होगा ! क्या वे इमानदारी से यह कह सकते हैं कि ''देवदास' की तुलना में मेरा कोई भी चरित–नायक अधिक दुर्बल प्राण हैं ? या चरित्रहीन के 'श्रीकांत' अथवा 'गृहदाह' के नायकों की तुलना में मेरा कोई भी प्रधानपात्र अधिक निस्सार है ? तब आलोचक बंधुओं ने कभी यह आवाज पूरे जोरों से क्यों नहीं लगायी कि सर्वमान्य उपन्यासकार शरतचन्द्र के प्रधान चरित नायक भी बड़े दुर्बल और क्षीण प्राण हैं ? इसका एक मात्र कारण मैं यही समझाता हूँ कि हमारे आलोंचकों में दूसरें प्रांतो अथवा दूसरे देशों के ख्याति प्राप्त उपन्यासकारों के विरुद्ध कोई भी राय कायम करने का साहस अथवा आत्मविश्वास का अभाव है...कुछ भी हो मैं यह कह रहा था कि मेरे अधिकांश चरित नायक निश्चित रुप से दुर्बल स्वभाव के हैं, यहीं उनकी सबसे बड़ी विशेषता है। मैने जान बूझकर दुर्बल नायकों को चुना हैं। यदि मैं चाहता तो अपने प्रत्येक नायक कों अत्यंत सुदृढ–चरित्र, महान प्रतापी, महापुरुष अथवा आदर्श महानेता के रूप में चित्रित कर सकता था ।''[६२]

आलोचकों और इलाचन्द्रजी का जो भी कहना और मानना हो, जोशीजी के नायकों के बारे में मेरा मानना है कि ये दुर्बलताएँ नायक की नहीं, बल्कि व्यावहारिक जगत के प्रभाव में उतर आयी है। अंतर्जगत क्योंकि सच्चे साहित्यकार के साहित्य में समाज का प्रतिबिंब रहता है और जोशीजी के साहित्य में इसे देखा जा सकता है। दूसरी बात यह भी हो सकती है कि जोशीजी के कथन अनुसार वे भी महान और

आदर्श नायक की रचना कर सकते थे । वे भी धीरोदत्त एवं धीरोदात्त ललित बना सकते थे, किन्तु उनका उद्देश्य तो मानवीय दुर्बलताओं से युक्त नायक की रचना करना था यही कारण है कि इसमें स्वाभाविक तौर पर कुछ बातें कही गई हैं। अत: हमें ऐसी बातों को नजर अंदाज करके नायक के मनोविश्लेषण को ही देखना है अगर हम मूल कारण के लिए व्यक्ति के मन मात्र को देखेंगे तो योग्य नहीं होगा, इसके साथ–साथ हमे बाहरी परिस्थितियों की भी छान–बीन करनी होगी। मैं मानता हूँ इन सब बातों के सामने रखकर मानव के मनोमय चित्त की परतों को खोलकर इलाचन्द्र जोशी ने समाजगत जड़ता और मानवीय दुर्बलताओं को उजागर किया है।

***

–: संदर्भ सूचि :–

(१) उपन्यासकार जैनेन्द्र के पात्रों का मनोवैज्ञानिक अध्ययन :

डॉ. बलदेवसिंह राणा पृ. २८

(२) हिन्दी उपन्यासों में नारी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण :

डॉ. विमलसहस्त्र बुद्धे पृ. १६६

(३) अज्ञेय एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन :

डॉ. ज्वालाप्रसाद सक्सेना पृ. ०६

(४) फ्रायड मनोविश्लेषण :

अनुवादक– देवेन्द्र वेदांकर पृ. १०३

(५) आधुनिक मनोविज्ञान और हिन्दी साहित्य :

गंगाधर झा पृ. ६९

(६) हिन्दी उपन्यासों का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन :

गिरिधरप्रसाद शर्मा – पृ. १४

(७) मनोविज्ञान का इतिहास

डॉ. रामइकबाल पांडेय पृ. ११५

(८) वहीं – पृ. २०५

(९) द्रष्टव्य – फ्रायड़वाद–

मोहनचन्द्र जोशी और मीरांजोशी पृ.३३

(१०) वहीं – पृ. १०

(११) हिन्दी उपन्यासों का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन :

डॉ. गिरिधरप्रसाद शर्मा – पृ. २७

(१२) मनोविज्ञान का इतिहास–

डॉ. रामइकबाल पांडेय पृ. २२१

(१३) मनोविज्ञान के संप्रदाय–

डॉ. रामगोपालसिंह वर्मा पृ. १२०

(१४) मनोविज्ञान का इतिहास–

डॉ. रामइकबाल पांडेय – पृ. २१३

(१५) मनोविज्ञान के संप्रदाय–

डॉ. राजपालसिंह पृ. १३५

(१६) अज्ञेय : एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन

डॉ. ज्वालाप्रसाद खेतान पृ. १२

(१७) विवेचना – इलाचन्द्र जोशी पृ. ५४

(१८) संन्यासी – इलाचन्द्र जोशी पृ. ५०

(१९) वहीं – पृ. ६४

(२०) वहीं – पृ. ११७

(२१) वहीं – पृ. ११७

(२२) वहीं – पृ. ९२

(२३) वहीं – पृ. १३५

(२४) वहीं – पृ. १३६

(२५) वहीं – पृ. २०४

(२६) वहीं – पृ. २३१

(२७) वहीं – पृ. २४२/२४३

(२८) वहीं – पृ. ३८१

(२९) वहीं – पृ. ३५१

(३०) पर्दे की रानी – इलाचन्द्र जोशी पृ. १९३ / १९४

(३१) वहीं – पृ. १९४

(३२) वहीं – पृ. १७८

(३३) प्रेत और छाया – इलाचन्द्र जोशी पृ. ८०

(३४) वहीं – पृ. १४८

(३५) वहीं – पृ. २५०

(३६) वहीं – पृ. ३०३

(३७) वहीं – पृ. ३६७

(३८) निर्वासित – इलाचन्द्र जोशी पृ. १५१

(३९) वहीं – पृ. ३१७

(४०) इलाचन्द्र जोशी – राजेन्द्र कुमार पृ. ४८

(४१) निर्वासित – इलाचन्द्र जोशी – पृ. ५६

(४२) वहीं – पृ. १९९ / २००

(४३) वहीं – पृ. ६०

(४४) वहीं – पृ. ७७

(४५) त्याग का भोग – इलाचन्द्र जोशी पृ. ९० (जिप्सी)

(४२) वहीं – पृ. १०६/१०७

(४३) वहीं – पृ. ६०

(४४) वहीं – पृ. ७७

(४५) त्याग का भोग – इलाचन्द्र जोशी पृ. ९० (जिप्सी)

(४६) वहीं – पृ. १०६ / १०७

(४७) वहीं – पृ. ३७४

(४८) जहाज का पंछी – इलाचन्द्र जोशी – पृ. ६६

(४९) वहीं – पृ. ३३६

(५०) वहीं – पृ. १७८

(५१) वहीं – पृ. ३५८

(५२) वहीं – पृ. २१२

(५३) वहीं – पृ. १८

(५४) ऋतुचक्र – इलाचन्द्र जोशी पृ. ८० / ८१

(५५) वहीं – पृ. १००

(५६) वहीं – पृ. २५१

(५७) वहीं – पृ. २८६

(५८) कवि की प्रेयसी – इलाचन्द्र जोशी पृ. २५

(५९) वहीं – पृ. ३१

(६०) वहीं – पृ. १८४

(६१) वहीं – पृ. १०३

(६२) साहित्य चिंतन – इलाचन्द्र जोशी पृ. ९१ / ९२ / ९३

***

पंचम् अध्याय

इलाचन्द्र, जैनेन्द्र और अज्ञेय के नायकों का तुलनात्मक मनोविश्लेषण

– पूर्वभूमिका

– तीनों उपन्यासकार के अहंवादी नायक

– इलाचन्द्र जोशी के नायक

– जैनेन्द्र के नायक

– अज्ञेय के नायक

– तुलना

– संदर्भ ग्रंथ सूची

***

पंचम् अध्याय

हिन्दी उपन्यास के क्षेत्र में मनोविज्ञान के सिद्धांतो के नियोजन से उपन्यास को एक नई दिशा और प्रेरणा मिली। इसके पूर्व के परंपरागत उपन्यासों में ऐयारी, जासूसी, तिलस्मी, सामाजिक, ऐतिहासिक एवं राजनैतिक तथा आँचलिक कथानकों में मानव तो केन्द्र में रहा ही है, किंतु उसमें मानव के बर्हिजगत का चित्रण ही अधिक मिलता है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में मानव के बर्हिजगत के साथ–साथ अंतर्जीवनगत भावों का भी चित्रण होने लगा । फ्रायड ने मानव की विविध प्रकृति व भावों को हमारे सामने रखा। उपन्यासकारों ने मानव के सत्त्व को तथा उसकी मानसिक स्थिति व मन की अवस्था को मनोवैज्ञानिक ढंग से प्रस्तुत किया। हिन्दी में मनोवैज्ञानिक उपन्यास पिछले चार–पाँच दशकों से लिखे गए हैं। ऐसे मनोवैज्ञानिक उपन्यासकारों में जैनेन्द्र, इलाचन्द्र जोशी तथा अज्ञेय का नाम उभरकर आता हैं।

हिन्दी उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक प्रयोग करनेवालों में जैनेन्द्र का नाम प्रथम है। उन्होंने मानव मन में उठ़नेवाली अनेकविध उन समस्याओं को उभारा है, जो मानसिक कुंठाओं और ग्रंथि के कारण उत्पन्न हुई हैं। जैनेन्द्रजी ने व्यक्ति के अन्तर्मन को प्रमुखता दी है। उन्होंने 'परख', 'कल्याणी', 'त्यागपत्र', 'सुखदा', 'सुनीता' आदि उपन्यासों में व्यक्ति के माध्यम से अभिव्यक्ति की है। उनके व्यक्ति प्रधान उपन्यासों के बारे में नंददुलारे बाजपेयी का कथन है कि– ''जैनेन्द्र की साहित्य सृष्टि व्यक्तिन्मुखी है। उनका जीवन सामाजिक जीवन के व्यापक स्वरूप से कम ही है। वे वैयक्तिक मनोभावों और स्थितियों के चित्रकार हैं। जैनेन्द्र सामाजिक जीवन से दूर जाकर जिस साहित्य की सृष्टि करते हैं उसमें व्यक्ति के मानसिक संघर्ष और उसकी परिस्थिति जन्य समस्याएँ प्रमुख रूप से आती है।''[१]

मनोवैज्ञानिक उपन्यास की परंपरा का अनुकरण करनेवाले हिन्दी के दूसरें उपन्यासकार हैं– इलाचन्द्र जोशी; जिन्होंने जैनेन्द्र की व्यक्तिवादी और मनोवैज्ञानिक परंपरा को विकसित और पुष्ट किया हैं।

जोशीजी ने उसे जीवन के व्यापक धरातल पर प्रतिष्ठित करने का उपक्रम रचकर सफलतम प्रयास किया। उनका मत है कि– ''व्यक्तिगत जीवन की समस्याएँ ही संसार में महान राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक चक्रों के बीजरूप बल्कि मूलगत प्रतीक और आधारभूत सिद्धांत हैं। जब तक आप इन व्यक्तिगत समस्याओं के भीतर निहित रूपकों में विश्व के विराट जीवन चक्र की समस्याओं को देखने की दृष्टि नहीं रखेगें तब तक आप न तो प्रगति के रूप में परिचित हो सकते हैं, और न साहित्य कला के मूल प्राणों का विकास आपको आगे भासित हो सकता है।''[२]

श्री इलाचन्द्र जोशी ने फ्रायड़वादी विचारधारा को अपनाया है। फ्रायड़ ने मानव मन के तीन स्तर माने है– चेतनमन, अचेतनमन और अर्धचेतन मन। मानव का अचेतन मन उसकी पाशविक प्रवृत्तियों का गुप्त भंडार है तथा यह अत्यंत अंधकारपूर्ण है। उन्होंने अपने उपन्यासों में कथा का आधार व्यक्ति की मानसिक कुंठाओं और उलझनों से लिया है। उनके सभी उपन्यास 'लज्जा' से लेकर 'प्रेत और छाया' में किसी न किसी मनोग्रंथि को लेकर लिखे गये दृष्टिगोचर होते हैं। जोशीजी ने मानव की विकृतियों तथा रुग्ण मनोभावों को विशेष प्रमुखता दी है।

इसी परंपरा के तीसरे प्रमुख उपन्यासकार है– श्री सच्चिदानंद हीरानन्द वात्स्यायन– 'अज्ञेय' जिनका हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में उल्लेखनीय योगदान है। उन्होंने जैनेन्द्र और इलाचन्द्र जोशी की भाँति सिगमंड फ्रायड़ के मनोविज्ञान का आलंबन लेकर व्यक्ति की अंतर्जगत से संलग्न विकृतियों में कुंठाएँ, चरित्रगत अभाव और संभावनाओं की विवेचना अपने उपन्यासों में की है। उनके तीनों उपन्यासों में मनोवैज्ञानिक प्रौढ़ता का सहज दर्शन होता है। विशेष रूप से मानवजगत को गति देनेवाली अनिवार्य प्रेरक शक्तियाँ अहम्भाव और सेक्स का उभार अज्ञेयजी के उपन्यासों में दृष्टिगोचर होता है। उन्होंने अहंम मन्यता, आत्मरति और मुक्तभोग को निन्दनीय न मानकर उसे वैज्ञानिक सिद्धांतो के आवरण में सजाकर व्यक्ति मन के भीतर झाँकने का प्रयत्न किया है। अज्ञेयजी ने इन तीनों प्रवृत्तियों के दमन या शमन के लिए

कोई निर्देश नहीं किया, बल्कि उसकी महत्ता का स्वीकार किया है। अत: यह कहा जा सकता है कि वह परिवार, समाज और शासन के बन्धनों से विद्रोह कर बैठता है। वह कह उठ़ता है–

''मुझे विश्वास है कि विद्रोही बनते नहीं, उत्पन्न होते हैं। विद्रोही परिस्थितियों से संघर्ष की सामर्थ्य जीवन की क्रियाओं से, परिस्थिति के प्रति घात–प्रतिघात से नहीं निर्मित होती । वह आत्मा का कृत्रिम परिवेष्ट नहीं है, उसका अभिन्न अंग है।''[३]

''अज्ञेय ने मानव जीवन को प्रचालित करनेवाली तीन प्रवृत्तियाँ अहमता, सेक्स और भय मानी हैं। उनके औपन्यायिक चरित्रों में इन तीनों ही प्रवृत्तियों का चित्रण और विकास मिलता है। अज्ञेय ने हिन्दी उपन्यास साहित्य को तीन उपन्यास दिये हैं। 'शेखर एक जीवनी' (दो भागों में), 'नदी के द्वीप और अपने अपने अजनबी । इन तीनों उपन्यासों में उपर्युक्त तीनों प्रचालक प्रवृत्तियों में से एक–एक की प्रधानता मिलती है– 'शेखर एक जीवनी' में 'अहं' को अधिक प्रमुखता मिली है, 'नदी के द्वीप' में 'सेक्स' प्रमुख है और 'अपने–अपने अजनबी' में 'भय।''[४]

वैसे तो हिन्दी के किसी भी उपन्यासकार ने बाह्य क्रियाओं के विवरण द्वारा पात्रों की आंतरिक सत्ता को प्रकट करने का प्रयत्न नहीं किया है। जैनेन्द्र के सुनीता के पश्यात् के उपन्यासों में प्राय: विवरण कम हुए हैं, कथानक को आगे बढ़ाने के लिए आवश्यकतानुसार उनका प्रयोग हुआ है। मनोविकारों का स्पष्टीकरण संभाषण में ही होता है। इलाचन्द्र जोशी विकारों के विश्लेषण की स्वयं व्याख्या करते हैं। वे पात्र से ही उसकी व्याख्या करवाते हैं और पात्रों से अपने ही मनोभावों का विश्लेषण करवाते हैं। स्थिति जब चरमसीमा पर हो तब पात्र स्वयं अपने चेतन और अचेतन की व्याख्या करने लगते हैं। जैसे 'प्रेत और छाया' में उसको विश्लेषण अस्वाभाविक सा हो जाता है। अज्ञेय ने 'शेखर एक जीवनी' में मनोभाव की पद्धति को कहीं–कहीं पहचाना है। शेखर में जिन प्रवृत्तियों का विवरण मिलता है, उनके पीछे कुछ मनोग्रंथियाँ भी निहित हैं। जिसे अज्ञेय ने स्वाभाविक तौर पर उठाया है। 'नदी के द्वीप' में इस क्षेत्र में

अज्ञेय कुछ आगे बढ़े हैं और उनका ध्यान पात्रों की उन सूक्ष्म क्रियाओं की ओर भी गया है, जो उनके मानसिक घरातल पर सदैव छाइ रहती हैं।

तीनों उपन्यासकार के नायक में समानता और भिन्नता :

जोशीजी, जैनेन्द्र और अज्ञेय के अहंवादी नायक :

मनोविज्ञान के क्षेत्र में तीनों उपन्यासकारों का पदार्पण हिन्दी साहित्य के लिए युगांतकारी घटना रही है। इनमें आलोच्य उपन्यासकार इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों का विशेष महत्व है। तीनों उपन्यासकार युंग, फ्रायड़ और एड़लर से प्रभावित हैं।

'संन्यासी' के नायक नंदकिशोर की विकृतियों का कारण उसकी प्रबल अहं भावना है, जिसके कारण वह जीवनभर शांति प्राप्त नहीं कर सकता । उसकी अहं भावना का पोषण करनेवाली रहीं है– **'उसकी अबतक की सहज परिस्थितियाँ।'**

आगरे में जयन्ती के संकेत से भाइयों द्वारा दिये दस रुपये का नोट लौट़ा देने पर फाड देना

–'संन्यासी'

आदि प्रसंगो में प्रबल अहंकार ही है। यही वजह है कि वह अपने जीवन में आई दोनों नारियाँ शांति और जयन्ती के साथ सहज होकर नहीं रह सकता ।

जैनेन्द्र के 'सुनीता' उपन्यास का हरिप्रसन्न, विवर्त का नरेश, व्यतीत का जयन्त, सुखदा का कान्त आदि नायक अपने को अपूर्ण पाकर दूसरों की अपेक्षा रखते हुए भी अपने अहं में डूबे हुए हैं। इसी कारण न तो वे स्वयं किसी को समर्पित होते हैं और न किसी के समर्पण को स्वीकार कर पाते हैं। बल्कि अपने में अपने को लिए चलते हैं।''[५]

'अज्ञेय'ने शेखर के चारित्र्यिक विकास में जो असाधारण विकृति दिखाई है, वह उसकी अहम् प्रवृत्ति से प्रभावित समझी जानी चाहिए।

'नदी के द्वीप' का भुवन भी अह्मवादी नायक है। अहं के कारण ही एक ओर चेतन स्तर पर सामाजिक मूल्यों को ठुकराने का संतोष करने पर वह सामाजिक मूल्यों और अहं की टक्कर में अपने आप केन्द्रित हो जाता है।

''इन तीनों मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकारों के अहंग्रस्त चरित्रों पर दृष्टिपात करने पर कुछ तथ्य सामने आते हैं जिसे जैनेन्द्रने अहम् ग्रस्त पात्रों के अहं के विरुद्ध विद्रोह एवं दमन के रूप मे उभारा है। जोशीजी ने मनोविश्लेषणात्मक विधि से अहं का उद्घाटन एवं विश्लेषण किया है तथा उसके रचनात्मक उपयोग की चिंता की है। अज्ञेय ने अहं की महत्ता को स्वीकार करते हुए अहं की प्रतिष्ठा का प्रयास किया है।''[६]

इलाचन्द्र जोशी के नायक :

(१) जोशीजी के संन्यासी, 'निर्वासित' एवं 'प्रेत और छाया' उपन्यास को ले तो इन तीनों उपन्यासों के नायकों की समस्त प्रवृत्तियाँ सहज ही सेक्स से प्रेरित लगती हैं।

(२) जोशीजी ने अपने नायकों पर फ्रायड़ आदि के सिद्धांतो का सीधा समर्थन नहीं किया है। किन्तु अपने उपन्यासों में फ्रायड़ या किसी अन्य के मनोवैज्ञानिक सिद्धांतो का निषेध भी वे नहीं करते हैं। उनके उपन्यासों के क्रमिक अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि उनकी मूल प्रेरणा सामाजिक ही है।

(३) जोशीजी के नायक जीवन में कर्मठ बनकर सशक्त होना नहीं जानते। उनके निकट जीवन एक गहरी लाचारी और निकम्मापन को सदा घेरे रहता है। वे जीवन में संघर्ष करने से भय खाते हैं। जोशीजी के नायक में विवेक की कमी नहीं है। वे हृदय से संयमी हैं, फिर भी मानसिक व्यथा के कारण पंगु हो गये

हैं। जोशीजी आदर्शवाद की तनिक भी चिंता नहीं करते और कथा को अश्लील बनाना भी इनका प्रयोजन नहीं हैं। पर सत्य को ज्यों का त्यों कह देना उनके नायक का अनूठा स्वभाव है। जोशीजी के नायक कहीं–कहीं पर स्वयं अपने मन की बात का विश्लेषण करते हैं। उन्होंने नायक के साथ–साथ कहीं पक्षपात भी किया है, जैसे– 'संन्यासी' में नंदकिशोर' का पक्ष लेते हुए वे बताये गये हैं। जब कि जैनेन्द्र और अज्ञेय ने पात्रों को स्वतंत्र छोड़ दिया है।

(४) जोशीजी मनोविश्लेषण की दिशा में अवचेतन मन पर भी पूर्णरूप से ध्यान देते हुए प्रतीत होते हैं और आचरण के रहस्य को स्पष्ट करते हुए पात्र का विश्लेषण करना चाहते हैं। जिसे इन विभिन्न उपन्यासों के नायकों के वक्तव्यो में देखा जा सकता हैं–

''उसका जला–भूना मन इस प्रकार का तर्क करता रहा था, पर उसका अन्तर्मन भीतर ही भीतर उस लड़की की 'थोथी भावुकता' के प्रति श्रद्धा और संभ्रम से बार–बार झुक–झुक पड़ता था''

–'प्रेत और छाया'।

'उनकी यह चंचलता देखकर मेरे मन में घृणा का सा उद्रेक हो जाता था, पर उसके स्निग्ध, सुन्दर, मधुर हास मे मेरे लिए वैसा ही प्रबल आकर्षण भी वर्तमान था– 'संन्यासी'

यहाँ पर दोनों स्थलों पर ध्यान देने की बात है, वास्तव में नायकों की निकट अन्तर्मन की बात ही सत्य है। शेष तो नायकों का मिथ्या प्रलाप लगता है। पर उस प्रकार की बात कुछ भी न होते हुए भी नायकों के लिए निकट अन्तर्द्वन्द्व की सृष्टि तो करती है। इस बात पर इलाचन्द्रजी ने प्रत्येक उपन्यास में ध्यान दिया है।

(५) जोशीजी के नायक चंचल प्रकृति एवं स्वयं से अनभिज्ञ होते हुए भी उनके पास विद्या और बुद्धि का अभाव नहीं रहता फिर भी साथी चुनने के सम्बन्ध में उनका मन सदा भटकता चलता है। वैसे जोशीजी ने

इसे शायद मानव स्वभाव के रूप में लिया है, और इस दिशा में प्रत्येक को रोग ग्रसित माना है क्योंकि जोशीजी का कोई नायक किसी एक प्रेमिका के मोहपाश में बँधकर रहना नहीं जानता। सच्ची बात तो यह है कि वह सही निर्णय करने में ही सदा असमर्थ रहता है, ज्यादातर उपन्यासों में नायक की यही मन:स्थिति पायी जाती हैं।

(६) जोशीजी के नायक परिस्थिति से लोहा लेना नहीं जानते कुछ हदतक पलायनवादी होने के साथ–साथ समझौतावादी भी पाये जाते हैं।

(७) जोशीजी ने अपने नायकों के चरित्र का यथार्थ चित्रण किया है, क्योंकि उन्होंने ऐसे ही चरित्र चुने हैं, जिनकी समाज में जिसकी बहुलता है और संपूर्ण समाज की मनोदशा को व्यक्त करना चाहते हैं। इसीसे वे बड़े से बड़े रूप को भी व्यक्त करनेवाले पात्र चुनते प्रतीत होते हैं। इस दिशामें जोशीजी ने बहुत बड़ा कार्य किया है और अपेक्षित सफलता प्राप्त की है।

जैनेन्द्र के नायक :

जैनेन्द्र मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार हैं, स्वाभाविक ही जैनेन्द्र के नायक पर मनोवैज्ञानिक सिद्धांतो की छाप रहेगी ही। फिर भी पात्रों और चरित्रों के विषय में कथा के अनुरूप पात्र की यथार्थता का जैनेन्द्र अधिक समर्थन करते हैं। यथा– ''सृष्टि स्रष्टा को छिपाए है। मुझे भी अपने इन पात्रों के पीछे छीपा माने, पर सृष्टि स्रष्टा को ही व्यक्त करती हे, और यह पुस्तक मुझे व्यक्त करने को बनी है। फिर भी सृष्टि ही तो दिखती है, स्रष्टा कहाँ दिखता है ?''[७]

जैनेन्द्र का मानना है कि सामान्यत: कथा का प्रतिनिधित्व करनेवाला पात्र यथार्थ ही होना चाहिए। मात्र आदर्श पात्र नहीं चलेगा, आदर्श का विरोध करते हुए जैनेन्द्रने कहा है कि–

(१) ''यही नहीं कि पुराण–पुरुष ही सदा–सर्वदा साहित्य के नायक बने रहेंगे। पर नायक के लिए आवश्यक हैं कि वह लेखक के रक्तार्पण से बना हो।''[८]

(२) ''...चरित्र स्पर्धाजन्य होकर महत्व के चरम तक नहीं पहुँच सकते। यदि पुराण पुरुषों तक हमारी गति न हो, महत् चरित्र–पात्र यर्थाथता की ओर चलने से शायद सृष्ट हो सके, आदर्श की ओर चलने में उतने बल का अवधारण मुश्किल से ही हुआ करता है।[९]

जैनेन्द्रजी मानते हैं कि यदि पात्र यथार्थ होंगे तो उनका व्यवहार भी यथार्थ होगा, अतः कथा 'विचार' का समर्थन करनेवाली आदर्श कथा न रहकर यथार्थ कथन हो जायेगी। जैनेन्द्रजी के उपन्यासों के नायक को हम निम्नांनुसार देख सकते हैं–

(१) जैनेन्द्र के नायक के साथ सहनायक प्रधानरूप से मिलता है। नायक और सहनायक के बीच में एक प्रतिभा संपन्न नारी होती है। ये स्थिति सुनीता, व्यतीत और मुक्तिबोध में देख सकते हैं।

(२) जैनेन्द्र के नायक भारतीय परंपरा के अनुसार या कौटुंबिक दृष्टि से विद्रोही हैं। सामाजिकता के विरुद्ध वह अपनी पत्नी को भी अपने दोस्त को सौपता है।

(३) जैनेन्द्र के नायक सुनिश्चित साँचे में ढले हुए है। उनके नायक की अपेक्षा प्रतिनायक शक्तिशाली लगते हैं। यथा 'सुखदा' में कान्त की अपेक्षा लाल, 'सुनीता' में श्रीकान्त की अपेक्षा हरिप्रसन्न और विवर्त में जितेन की अपेक्षा नरेश अधिक प्रभावशाली पाये जाते हैं।

(४) जैनेन्द्र के नायक में चिंतन का बहुत ही कम प्रभाव है। यह जैनेन्द्र की विशेषता भी है, और अभिव्यक्ति की सीमा भी। यही वजह है की उनके नायक अदम्य पौरुष से प्रेरित नहीं होते। वे स्वतंत्र पुरुषार्थ के प्रतीक नहीं बन सके है। इस संदर्भ में शचीरानी गूर्टु का कथन है कि–

जैनेन्द्र के सभी उपन्यासों के नायक स्त्रेण पति हैं उनके लिए पत्नी का सेकि न्ड हेन्ड प्रेम जरा भी तिरस्करणीय नहीं, मानो एक अपौरषेय नर–कंकाल मात्र है, जिनमें खौलता खून और प्राणों के स्पंदन का सर्वथा अभाव है।[१०] जब कि इलाचन्द्र के नायक ज्यादातर चिंतनशील पाये जाते हैं। उनके नायक पर चिंतन आरोपित सा लगता है। अतः वह उनके जीवन का सहज हिस्सा नहीं बन पाया है।

(५) जैनेन्द्र के उपन्यासों में नायक की सीमा अनंत एकांकी हैं। वे जीवंत मानव न होकर नैराश्य की गुहा में भटकते हुए मूर्ति स्वरूप हैं। तथा अहिंसकीय मुद्रा में वे कष्ट झेलने और नारी हृदय परिवर्तन की प्रतीक्षा करते हुए गांधीवादी दर्शन की अभिव्यंजना प्रस्तुत करते हैं। इलाचन्द्र के अंतिम उपन्यासों के नायक भी ज्यादातर समझौतावादी और व्यवहारू लगते हैं।

(६) ''जैनेन्द्र के पुरुष बाते करते हैं, और नारियाँ कर्तव्य निभाती है। मुक्ति बोध के सहाय और अनन्तर के प्रसाद बात के सिवा और कुछ नहीं करते।११

(७) जैनेन्द्र के नायक नारियों का सन्मान करते हैं, प्रेम करते हैं, पीछा करते हैं, अपनाने की कोशिश करते हैं, किन्तु उनके अनुकूल होते ही वे दूम दबाकर खिसक जाते हैं। यथा–

''जैनेन्द्र के प्रत्येक उपन्यास में कुछ ऐसे पात्र मिलते हैं, जिनका सेक्स जीवन असंगत है। इन पात्रों में बहादुरी की कमी नहीं है। फिर भी 'सुनीता' के हरिप्रसन्न पिस्तौलधारी क्रांतिकारी है, किन्तु नग्न सुनीता को देखकर टूट जाकर मुँह लटकाकर बैठ जाता है। 'त्यागपात्र' के जजसाहब(प्रमोद) ज्ञानी हैं, किन्तु नारी के सामने दुम दबाकर भागते हैं। 'सुखदा' के लाल डाका डालते हैं, किन्तु सुखदा को आलिंगन में लेकर ही छोड देता है। 'व्यतीत' के जयन्त अपनी विवाहित पत्नी को तडपती छोडकर आकाश के चाँद को एक बजे रात तक निहारता हैं...जयवर्धन भी इला के साथ ठंडा, आवेगहीन व्यवहार करता हैं।''[१२]

(३) अज्ञेय के नायक :

(१) अज्ञेय के नायक काम, अहम् और भय से ग्रस्त हैं। 'शेखर एक जीवनी' में शेखर को उपर्युक्त तीनों बातों से ग्रस्त चित्रित किया गया है।

(२) अज्ञेय के नायक दमन या शमन का स्वीकार करते हैं। अत: एक प्रकार से यह भी कहा जा सकता है कि उन्होंने अपने उपन्यासों में सामाजिक स्थिति एवं परंपरा के प्रति विद्रोह की भूमिका प्रस्तुत की है। 'शेखर एक जीवनी' का नायक शेखर इसी भूमिका के प्रति अग्रसर होता है, और एक समय ऐसा आता है कि वह परिवार, समाज तथा शासन के बंधनों से विद्रोह कर बैठता है। वह कहता है–

''मुझे विश्वास है कि विद्रोही बनते नहीं, उत्पन्न होते हैं''। विद्रोह बुद्धि परिस्थितियों से संघर्ष की सामर्थ्य जीवन की क्रियाओं से परिस्थितियों के प्रति घात–प्रतिघात से नहीं निर्मित होती, उसका अभिन्नतम अंग है।[१३]

(३) अज्ञेय के नायक में लिबिडो को हम स्पष्ट रूप से देख पाते हैं। 'नदी की द्वीप' के भुवन और रेखा में यौन व्यवहार का सम्बन्ध है। रेखा जो हेमेन्द्र से अतृप्त रही है; भुवन से शारीरिक सम्बन्ध स्थापित कर 'फूलफिलमेन्ट' का अनुभव करती है। वह भुवन से कहती है–

''आपने कभी पानी के फूव्वारें पर टिकी गेंद को देखी है। बस जीवन वैसा ही है, क्षणों की धारा पर उछलता हुआ। जब तक धारा है तब तक बिलकुल सुरक्षित सुस्थापित । नहीं तो पानी पर टिक होने से अधिक बेपाया चीज है ?''[१४]

(४) अज्ञेय के नायक व्यभिचार से घृणा करते हैं। यथा भुवन रेखा के आवेशपूर्ण आत्म समर्पण को नकारता है।

(५) अज्ञेय कथानायक के माध्यम से अपने जीवन के कटु अनुभवों को व्यक्त करना चाहते हैं, जिन्होंने

उसे स्वयं देखा है, और उसकी पूर्णता के लिए ही अपने उपन्यासों में उपकथाओं की सृष्टि करते हैं। अतः अज्ञेय स्वयं नायक के रूप में आये हैं। अज्ञेयजी के दूसरे उपन्यास नदी के द्वीप में भुवन भी अज्ञेय की ही प्रतिकृति है। लेखक ने केवल नाम बदल दिया है।

(६) अज्ञेय के नायकों का परिचय आकृति से दे–देने के बजाय बाल्य–काल की छोटी–छोटी घटनाओं द्वारा मन और मस्तिष्क तथा मानसिक स्थिति का वर्णन किया है। जब कि जैनेन्द्र मांसल और मानसिक स्थिति का चित्रण करते हैं, जोशीजी भी कुछ हद तक जैनेन्द्र के साथ ही हैं।

(७) अज्ञेयने अपने नायक के प्रति नायिका को पूर्णतः समर्पित बताया है। यथा शेखरः एक जीवनी में शेखर के प्रति शशि मानसिक रूप से समर्पित है। 'नदी के द्वीप' में भुवन से रेखा शारीरिक रूप से 'फूल–फिल्ड' होती है, तो अपने–अपने अजनबी में सेल्मा जीवन देकर जीवन खरीदती है। अर्थात् जीवन का साझा करती है, और यो के जीवन को समाप्त कर आत्मा से पवित्र पुरुष का वरण करती है। इस प्रकार अज्ञेय के नायक नायिका को शरीर से तृप्त कर आत्मा का आनंद देते हैं।

(४) तुलना :

(१) जैनेन्द्र के नायक दार्शनिक होने के कारण जीवन प्रश्नों में सदा उलझे रहते हैं। जब कि अज्ञेय और जोशी के नायक बाह्य जीवन से भी नाता रखते हैं।

(२) इलाचन्द्र के नायक किसी न किसी मनोरोग के शिकार हैं, जब कि अज्ञेय और जैनेन्द्र के नायक परिस्थितियों के शिकार हैं।

(३) जैनेन्द्र और अज्ञेय के नायक वेश्या के साथ चित्रित है, जब कि इलाचन्द्र के नायक ऐसे नहीं है। 'प्रेत और छाया' में पारसनाथ अपनी माँ के चरित्र की बात अपने पिता से सुनता है।

(४) अज्ञेय और जैनेन्द्र के नायक स्वयं अपना मनोविश्लेषण नहीं करते, जब कि जोशीजी के नायक अपने मन की बात या अपना मनोविश्लेषण स्वयं जगह–जगह पर करते हैं।

(५) इलाचन्द्र, अज्ञेय और जैनेन्द्र तीनों के नायक भय, अहम् या सेक्स से प्रेरित है।

(६) अज्ञेय, जैनेन्द्र और इलाचन्द्र ने अपने उपन्यासों में कही न कहीं क्लेशबेक और मौन संकेतों से अपने नायकों को उभारें हैं ।

(७) जैनेन्द्र के नायक ने समाज में क्रांति लाने की क्रांतिकारी बातें की है। जैसे त्याग पत्र का 'प्रमोद'। जब कि अज्ञेय और जोशी के नायक जैनेन्द्र के नायक जैसे क्रांतिकारी कम दिखते हैं।

जैनेन्द्र के नायक बाहर कम, भीतर ज्यादा, कामों में कम विचारों में ज्यादा जीते हैं। हरिप्रसन्न और जितने इसके उदाहरण हैं। अज्ञेय के नायक सरल है, जब कि इलाचन्द्र के नायक चालबाज हैं। नायिका को प्राप्त करने के लिए वह छल–कपट और झूठ बोलना, यहाँ तक कि संम्मोहन भी करते हैं।

'आचार्य नन्ददुलारे बाजपेयी जी इलाचन्द्र जोशी को मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार मानते हुए उनके उपन्यासों में व्यक्तिवादी चित्रण की प्रमुखता बताते हैं। वे कहते हैं कि उनके मनोवैज्ञानिक चित्रण व्यक्ति की असामान्य परिस्थितियों से सम्बन्ध रखते हैं और असाधारण वातावरण की सृष्टि करते हैं जिस प्रकार जैनेन्द्र के उपन्यास यौनवर्जनाओं के कच्चे उभार की सूचना देते हैं और जिस प्रकार अज्ञेय की कृतियों में आत्म श्रेष्ठता या अहं की भावना का व्याघात बना रहता है, उसी प्रकार इलाचन्द्र की औपन्यासिक रचनाओं में निष्पीड़न, निष्कासन और हत्या आदि की व्यक्तिगत विषाद और आत्म–ग्लानि जन्य भावनाएँ रहा करती हैं। उनका यह भी मंतव्य रहा है कि यदि वे व्यक्तिवादी कलाकार अनुदात्त भावनाओं और प्रकृतियों से उपर उठ़ पाते तो हिन्दी का बड़ा उपकार होता । किन्तु मेरा मानना है कि बावजूद इसके हिन्दी में ये तीनों उपन्यासकार ऐसे हैं जो प्रेमचंद युग के आदर्शवादी चरित्रों की तुलना में हमें व्यक्ति जीवन एवं चरित्र के अंतरंग कुरूप यथार्थ से अवगत कराने का श्रेय पाते हैं। ये पात्र के अंत:स्थल में झाँककर उसकी कुरूपता को नहीं दिखाते हैं, उन कुरूपताओं के कारणों की ओर भी संकेत कर जाते हैं। इन तीनों में

विशेषकार इलाचन्द्र जोशी क्लिनिकल अप्रोच रखकर स्वस्थ व्यक्तित्व निर्माण के मार्ग का निर्देश भी करते हैं। यही इलाचन्द्र के उपन्यासों का महती उपादान माना जायेगा।''[१५]

संक्षेप में कहें तो अज्ञेय के नायक पाठ़क को अपने में डूबो देते हैं, इलाचन्द्र के भी। किन्तु जैनेन्द्र के नायक पाठ़क के मस्तिष्क को झकझोर देते हैं। जैनेन्द्र के नायक फोर्म्यूलाबद्ध हैं वे प्रतिनायक से कमजोर लगते हैं। जब कि अज्ञेय के सभी नायक अपनी ही प्रतिकृति हैं, जो समय, उम्र और परंपरा के अनुसार दिखते हैं। तो इलाचन्द्र के नायक निश्चित सिद्धांतो में ढलकर आये हैं। अत: जोशीजी ने अपने नायक को निश्चित स्थिति से बाहर नहीं निकलने दिया है।

***

–: संदर्भ सूचि :–

(१) आधुनिक साहित्य – नंददुलारे वाजपेयी पृ. १६०

(२) विवेचना : इलाचन्द्र जोशी पृ. १७२

(३) शेखर : एक जीवनी भाग–१ : अज्ञेय पृ. २१

(४) हिन्दी उपन्यासों के असामान्य चरित्र

डॉ. सुजाता पृ. ३१८

(५) वहीं – पृ. ३१९

(६) हिन्दी उपन्यासों में चरित्र–चित्रण का विकास

डॉ. रणवीर राणा – पृ. ३६४

(७) सुनीता : जैनेन्द्र – प्रस्तावना पृ. ३

(८) समय और हम – जैनेन्द्र पृ. ५१०

(उद्धृत–हिन्दी उपन्यास सृजन और सिद्धांत – नरेन्द्र कोहली पृ. १३५)

(९) वहीं – पृ. १३६

(१०) जैनेन्द्र के उपन्यासों की विवेचना

–डॉ. विजयकुल श्रेष्ठ – पृ. २२७ / २२८

(११) हिन्दी उपन्यासों का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन

–डॉ. गिरिधरप्रसाद शर्मा – पृ. ९७

(१२) वहीं – पृ. १०१ / १०२

(१३) शेखर : एक जीवनी – अज्ञेय पृ. २१

(१४) नदी के द्वीप – अज्ञेय पृ. ४२

(१५) राष्ट्र वीणा: अगस्त १९९३

इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों के संदर्भ में एक लेख :

– डॉ. हिम्मत ठक्कर

***

षष्ठम् अध्याय

उपसंहार

मनोवैज्ञानिक सिद्धांतो की परिकल्पना ने साहित्य जगत में एक नई चेतना का संचार कर दिया है। इन सिद्धांतो के सहारे साहित्यकार अपने पात्रों के सूक्ष्म से सूक्ष्म मनोभावों को स्पष्ट करने में सफल रहे हैं। सच कहा जाय तो साहित्य और मनोविज्ञान दोनों मानव जीवन से जुडे हुए हैं तथा दोनों का सम्बन्ध मानव जीवन से अलग नहीं हो सकता । शायद इसी कारण से ही विधिवत् मनोवैज्ञानिक या मनोविश्लेषणात्मक उपन्यासों के प्रादुर्भाव के पहले ही साहित्य में मनोवैज्ञानिक प्रवृत्तियों का दर्शन होता था। पात्रों के सूक्ष्म एवं मार्मिक मनोविज्ञान सम्मत चारित्रिक विवेचन 'रामायण' और 'महाभारत' जैसे पुराण ग्रंथों में सहज ही देखा जा सकता है। हिन्दी के सामाजिक उपन्यासकार प्रेमचंदजी के पात्रो में मनोविज्ञान के व्यावहारिक प्रयोग से युक्त चरित्र हम देख सकते हैं– उदा. के लिए 'निर्मला' उपन्यास की नायिका निर्मल में हीनताग्रंथि का प्रभाव है। अनमेल विवाह से उत्पन्न दमित वासनाओं के कारण निर्मला कुंठा ग्रस्त नारी है। इतना होने पर भी हम प्रेमचंद के उपन्यासों को मनोवैज्ञानिक या मनोविश्लेषणात्मक नहीं कह सकते, क्योंकि मनोविज्ञान उनके उपन्यासों का मुख्य आधार नहीं है।

आधुनिक हिन्दी कथा साहित्य में मनोवैज्ञानिक कथा साहित्य का समावेश एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है क्योंकि इसके पूर्व साहित्यकार चेतन मन को अधिक महत्व देते थे; अवचेतन मन की बातों को वे प्रायः भूल जाते थे। लेकिन मनोवैज्ञानिक कथा साहित्य में पात्रों को बहुलता के साथ चित्रित किया जाने लगा। खास करके नायक या नायिका को मनोवैज्ञानिक तरीके से चित्रित किया जाने लगे। पात्रों की आंतरिक उथल–पुथल या अर्न्तद्वन्द्व की अभिव्यक्ति प्रमुख मानी जाने लगी। मनोवैज्ञानिक कलाकार पात्रों की मनोभूमि का चित्रण करते–करते सहज ही मनोविश्लेषण प्रक्रिया में खो जाते है। हमारे आलोच्य साहित्यकार इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास साहित्य में नायक को पढ़कर कहा जा सकता है कि वे मनोवैज्ञानिक सिद्धांतो पर आधृत मनोविश्लेषण को साथ लेकर चलनेवाले कथाकार हैं।

इलाचन्द्र जोशी ने मनोविश्लेषणात्मक शैली को कथा साहित्य में अपनी मौलिकता से अधिक प्रभावक्षम बनाया है। उन्होंने पाश्चात्य साहित्य एवं प्रमुख मनोवैज्ञानिक सिद्धांतों का विश्लेषण कर अपने तरीके से साहित्य में प्रयोग किया है। वे मानव के अन्तर्गत को अपनी रचना का आधार बनाकर उसका अध्ययन और अनुसंधान कर अधिकतर मनोवैज्ञानिक पात्रों की रचना करते हैं ।

मानव स्वभाव की विचित्रताओं का पर्दाफास करने में जोशीजी को काफी सफलता मिली है। चरित्रों की रहस्यमयता से पाठक में जुगुप्सा और कुतूहलता बनी रहती है। मानसिक द्वन्द्व, दमित कुंठा, वासना आदि का प्रस्तुतीकरण उन्होंने अपने उपन्यासों के नायकों में किया है। जोशीजी ने नायक के मनोविश्लेषण के साथ–साथ घटनाओं की व्याख्या भी की है और साथ ही साथ मनोवैज्ञानिक कारण भी दिये हैं। नायक के जटिल चरित्रोदघाटन में जितनी सफलता जोशीजी को मिली है, वह शायद ही किसी कलाकार को मिल सकती है।

इस शोध प्रबन्ध की उपलब्धि यही रही है कि जोशीजी ने अपने उपन्यासों के नायकों का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन मनोवैज्ञानिक तिकडी फायड, एडलर और युंग के सिद्धांतों को ध्यान में रखकर किया है जिसमें जोशीजी सफल भी रहे है। जोशीजी की यह शैली विविध मनोविकारों से ग्रस्त नायक के असाधारण चरित्र और आचरण के रहस्यों को उद्‌घाटित करने और उनमें पुनः साधारणता लाने में सफल मानी जाती है। इससे हिस्टीरीया आदि रोगों के मरीज़ को समझने में सहायता हो सकती है।

प्रथम अध्याय में जोशीजी के जीवनवृत्त को लिया है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार के साथ–साथ पत्रकार, निबंधकार, आलोचक, कहानीकार के रूप में जोशीजी ने हिन्दी साहित्य को बहुत कुछ दिया है। अतः जोशीजी एक उदार, मननशील, विश्वमानव के पोषक, विश्वजनीन हल ढूँढनेवाले साहित्यकार थे। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के प्रदान के लिए हिन्दी साहित्य जोशीजी को सदा याद रखेगा।

द्वितीय अध्याय में नायक को विशेष दृष्टिकोण से देखा गया है। जिसमें नायक शब्द की व्युत्पति से लेकर नायक के प्रकार, नायक के लक्षण, नाटक में नायक, महाकाव्य में नायक, उपन्यास में नायक पाश्चात्य और भारतीय दृष्टिकोण से नायक को देखा है। संस्कृत के आचार्यो ने काव्यशास्त्रीय ग्रंथों में नायक की परिकल्पना, सामंतशाही युग की परिस्थितियों में उच्चकुलीन सांमतों वा श्रीमन्तों को सिरमौर मान करके जो विधान किए, वे मात्र काव्य या नाटक तक सीमित रहे। समाज के सभी वर्गो को साथ में लेकर चलना तथा उन्हें भी समान प्रतिनिधित्व देने की भावना के विकास का प्रादुर्भाव रुपकों के अन्य प्रकारों में हुआ, इसी तरह का क्रमिक विकास हिन्दी उपन्यास विधा में देखा जा सकता है।

समय बदला उसीके साथ संदर्भ भी बदलते गये और नायक एक वर्ग, समाज या जाति का प्रतिनिधि न रहकर बदलते समाज की आवश्यकता और स्थिति के अनुरूप उसके मानदंड बदले। कभी जो नायक समाज से लडता था, वहीं नायक स्वयं से लडता दिखने लगा। नायकत्व किसी की जागीरदारी नहीं रहा, न ही कभी उसके स्वामीत्व का प्रश्न जिसे हमें आदिकालीन साहित्य में नायक के परिप्रेक्ष्य में देखकर आये हैं।

तृतीय अध्याय में प्रेमचंद पूर्व युग से लेकर प्रेमचंदोत्तर युग के उपन्यासों के नायक की चर्चा की है। व्यापक रूप से इस विचार पर प्रकाश डालते हुए निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि–

– प्रेमचंद पूर्व युग के नायक तिलस्म एवं ऐयार थे। वे दुश्मन के किले में या दूसरे राज्य में अपने फल की प्राप्ति के लिए अपने जान की परवाह किये बिना चले जाते थे; अतः वे साहसी, पराक्रमी और चालाक नायक थे।

– प्रेमचंद पूर्व के नायक वैविध्यपूर्ण थे, क्योंकि उपन्यासों का क्षेत्र विविध विषयों से सम्बन्धित रहा है, जब कि प्रेमचंद युग में उपन्यासों का कथा–फलक सामाजिक और राजकीय होने के कारण नायक का क्षेत्र

विस्तृत रहा । समाज के सभी वर्गों के प्रतिनिधि नायक के रूप में सामने आने लगे और सीमित अर्थात् अभिजात्य परम्परा का ह्रास एवं नायक की व्यापक पृष्ठभूमि दिखाई देती है।

– प्रेमचंद पूर्व के नायक वर्गगत थे उनके बाद में नायक मिश्रित रूप में आया, जिसमें व्यक्ति और जाति का समन्वय हुआ है।

– प्रेमचंद पूर्व काल के नायक उच्चकुलोत्पन्न या आभिजात्य वर्ग के हैं, किन्तु बाद में उच्चवर्ग मध्यमवर्ग, निम्न मध्यम वर्ग, किसान, मजदूर वर्ग के प्रतिनिधि भी नायक के रूप में आये।

(४) प्रेमचंद पूर्व के नायक लेखक के विचार लेकर आये हैं, नायक की विशेषता स्वयं लेखक बताते हैं, लेखक के विचार उन पर थोपे गये हैं, जब कि आज के नायक स्वतंत्र विचार शक्तिवाले हैं और उनके कार्य से ही उनकी विशेषताओं का पाठक को पता चल जाता है।

चतुर्थ अध्याय में इलाचन्द्र जोशी के उपन्यास साहित्य में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन किया गया है। जैनेन्द्र के पूर्व के नायक में मात्र बाह्य और शारीरिक संघठनात्मक स्थिति का चित्रण मिलता है जबकि मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में नायक के मनोमस्तिष्क से प्रेरित व्यापारों का चित्रण मिलता है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार इलाचन्द्र जोशी ने नायक के मन में प्रवेश कर उसकी अतल गहराइयों में जाकर उसके मानसिक रूप को एवं उसकी मनः स्थिति को झकझोर कर रख दिया है। इस प्रकार से उपन्यासकार ने नायक की मानसिक प्रक्रिया के विभिन्न सोपानों को चित्रित किया है। वैसे मानव मन को जानना, उसका चित्रण करना उतना आसान काम नहीं है फिर भी जोशीजी ने पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक तिकडी फ्रायड, एडलर और युंग के सिद्धांतों को ध्यान में रखकर उन स्थितियों का आंकलन किया और इस दिशा में एक नई परम्परा को स्थापित किया।

जोशीजी ने अपने उपन्यासों में नायक के जीवन मूल्यों को तलाशा है जोशीजी का मानना है कि

साहित्य का उद्देश्य मानव मन की व्याख्या करना है। उन्होंने नायक की भीतरी दबी घुटन, रिक्तता, पीडा, कुंठा, हीनता, सम्मोहन, इडिपस ग्रंथि, अहम्, परम अहम्, चेतन और अचेतन मन, द्वन्द्व, लिबिडो सिद्धांत, स्वप्न सिद्धांत, स्वैर विहार तथा सामूहिक अचेतन जैसे मानवीय भावों एव मनोविकारों को उद्घाटित किया हैं।

जोशीजी के नायकों में कहीं फ्रायड की दमित काम वासना का प्रभाव है, तो कहीं एडलर की हीनता ग्रंथि का, तो कहीं युंग द्वारा कथित आदिम प्रवृत्तियों का साहजिक एवं स्वाभाविक विस्फोट है। उनके नायकों में पाश्चात्य मनोवैज्ञानिको के सिद्धांतो का सम्मिश्रित प्रभाव देखा जा सकता हैं। द्रष्टव्य है कि ''संन्यासी'' में नंदकिशोर कि स्वयं दमित वासनाओं से प्रभावित है; परंतु जब उसकी महत्वाकांक्षा की पूर्ति न होने पर वह अत्यंत दु:ख से व्याकुल बनकर कहता है– ''बचपन से ही मेरे मन में बडे–बडे हौसले पैदा हुए थे। महत्वकाक्षां के बीज भी मेरे मन में पहले से ही थे। पर कुछ बाहरी और कुछ भीतरी कारणों से मैं अपनी एक भी उच्चआकांक्षा की सफलता की ओर कदम न बढ़ा सका।''[१]

निष्कर्ष रूप में जोशीजी के उपन्यास साहित्य में नायक का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन करने पर उनकी जो तस्वीर हमारे सामने आती है, वह निम्नांकित है–

(१) उनके नायक परंपरा के भंजक हैं।

(२) अर्न्तद्वन्द्व और अंतर्विरोध से ग्रस्त हैं।

(३) अपने व्यक्तित्व और अस्तित्व के प्रति संपूर्ण सजग हैं।

(४) अन्तश्चेतनावादी हैं।

(५) हीन भावना से ग्रस्त होने के साथ–साथ कुंठित और संशयी हैं और अपने आप से भीतर ही भीतर संघर्ष करते पाये जाते हैं।

ये किसी सामाजिक समस्याओं से झूझते नहीं बल्कि अपने भीतर की ग्रंथियों, एवं कुंठाओं से ही झूझते नज़र आते हैं। कभी इन्हीं से प्रभावित होकर आत्महत्या भी करते हैं, तो कभी अपनी ग्रंथि से उबरकर स्वस्थ व्यक्तित्व का भी परिचय देते हैं। 'पर्दे की रानी' का इन्द्रमोहन रेल से कूदकर आत्महत्या कर लेता है, जब कि 'प्रेत और छाया' का पारसनाथ ग्रंथि से मुक्त होकर स्वस्थ सामाजिक जीवन स्वीकार करता है।

पंचम् अध्याय में जैनेन्द्र, अज्ञेय और इलाचन्द्र जोशी के नायकों की मनोविश्लेषणात्मकस्थिंतियों का तुलनात्मक अध्ययन किया है।

निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि अज्ञेय के नायक पाठक को अपने में डूबो देते हैं । जैनेन्द्र के नायक पाठक के मस्तिष्क को झकझोर कर रह जाते हैं। जैनेन्द्र के नायक फोर्म्यूलाबद्ध है, वे प्रतिनायक से कमजोर लगते हैं जब कि अज्ञेय के नायक अज्ञेय की ही प्रतिकृति लगते है किंतु इलाचन्द्र के नायक निश्चित साँचे में ढलकर आये हैं और अपने नायक को निश्चित स्थिति से बाहर नहीं निकलने देते हैं।

''इन तीनों मनोविश्लेषणवादी उपन्यासकारों के अहम् ग्रस्त चरित्रों पर दृष्टिपात करने पर एक तथ्य सामने आता है कि जैनेन्द्र के अहं ग्रस्त पात्रों को अहं के विरुद्ध विद्रोहात्मक स्वरूप धारण करता हुआ दिखाया गया है। जोशीजी ने मनोविश्लेषणात्मक विधि से अहं का उद्‌घाटन एवं विश्लेषण किया है तथा उसके रचनात्मक उपयोग की चिंता की है। अज्ञेय ने अहं की महत्ता को स्वीकार करते हुए अहं की प्रतिष्ठा का प्रयास किया है।[२]

परिवर्तन एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। समाज भी परिवर्तनशील है, इसलिए साहित्य भी परिवर्तन का अधिकारी है। इस स्थिति में कोई भी अनुसंधान अंतिम नहीं हो सकता। अतः इस दिशा में नये संशोधनों और नये ज्ञान को तलाशने का अवकाश है।

आलोच्य शोध–प्रबन्ध में इलाचन्द्र जोशी के नायकों का मनोविश्लेषणात्मक अनुशीलन किया है जो इस दिशा में उठाया गया कदम मात्र है। आज के युग में समय के साथ–साथ नायक को लेकर अलग–अलग राय रखी जा सकती है।

व्यक्ति और समाज को अलग करके नहीं देखा जा सकता। दोनों के सामने अलग–अलग स्थितियाँ और दिशाएँ रही हैं, इसी परिप्रेक्ष्य में हिन्दी उपन्यास साहित्य में जोशीजी के उपन्यासों को व्यक्तिपरक और समाजपरक नजरिए से देखने पर उनमें निहित मनोभावों, अवस्थाओं, विषम परिस्थितियों या समस्याओं का मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन अध्येताओं के लिए अपेक्षित है।

***

–: संदर्भ सूचि :–

(१) संन्यासी – इलाचन्द्र जोशी पृ. २५३

(२) हिन्दी उपन्यासों में चरित्र–चित्रण का विकास रणवीर राग्रा पृ. ३६४

***

परिशिष्ट – १

ग्रंथानुक्रमणिका

आधारभूत ग्रंथ

क्रम	ग्रंथा का नाम	लेखक	प्रकाशन का नाम	संस्करण
१	लज्जा	इलाचन्द्र जोशी	भारती भंडार, लीडर प्रेस इलाहाबाद–१	पंचम संस्करण संवत २०२० वि
२	संन्यासी	इलाचन्द्र जोशी	भारती भंडार, लीडर प्रेस इलाहाबाद–१	सतवाँ संस्करण सन् १९८६ ई
३	पर्दे की रानी	इालचन्द्र जोशी	भारती भंडार, लीडर प्रेस इलाहाबाद–१	पंचम संस्करण
४	प्रेत और छाया	इलाचन्द्र जोशी	भारती भंडार, लीडर प्रेस इलाहाबाद–१	चतुर्थ संस्करण संवत २०३५ वि
५	निर्वासित	इलाचन्द्र जोशी	समृद्धि प्रकाशन, इलाहाबाद	संस्करण सन् १९८९
६	मुक्तिपथ	इलाचन्द्र जोशी	लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद –१	तृतीय संस्करण १९८९

क्रम	ग्रंथा का नाम	लेखक	प्रकाशन का नाम	संस्करण
७	सुबह के भूले	इलाचन्द्र जोशी	लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद –१	संस्करण १९९२
८	त्याग का भोग	इलाचन्द्र जोशी	लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद –१	चतुर्थ संस्करण १९९६
९	जहाज का पंछी	इलाचन्द्र जोशी	लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद –१	दसवाँ संस्करण २००१
१०	ऋतुचक्र	इलाचन्द्र जोशी	लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद –१	संस्करण १९९६
११	भूत का भविष्य	इलाचन्द्र जोशी	नेशनल पब्लिसिंग हाऊस, नई दिल्ली	द्वितीय संस्करण सन् १९७९
१२	कवि की प्रेयसी	इलाचन्द्र जोशी	राजपाल, एण्ड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली	प्रथम संस्करण १९७६

***

संदर्भ ग्रंथ

क्रम	ग्रंथ का नाम	लेखक	प्रकाशन	संस्करण
१	साहित्य चिंतन	इलाचन्द्र जोशी	श्री अजन्ता प्रेस लिमिटेड, पटना–४	प्रथम संस्करण १९९५
२	इलाचन्द्र जोशी	राजेन्द्र कुमार	साहित्य अकादमी रवीन्द्र भवन, ३५, फीरोज शाह मार्ग, नई दिल्ली	प्रथम संस्करण १९९३
३	उपन्यसाकार इलाचन्द्र जोशी	प्रो कृष्णदेव झारी	साहित्य प्रकाशन लक्कड बाजार अम्बाला छावनी	प्रथम १९५९
४	हिन्दी उपन्यास आधुनिक विचार धाराएँ	डॉ सुमित्रा त्यागी	साहित्य प्रकाशन मालीवाडा दिल्ली–६	१९७८
५	हिन्दी उपन्यास और सिद्धांत समीक्षा	डॉ मक्खनलाल शर्मा	प्रभात प्रकाशन २०५, चावडी बाजार दिल्ली–६	१९६६
६	हिन्दी उपन्यासों के असामान्य चरित्र	डॉ सुजाता	मंगल प्रकाशन, गोविंद राजियों का रास्ता, जयपुर–१	१९८३
७	हिन्दी उपन्यास और सिद्धांत	नरेन्द्र कोहली	सौरभ प्रकाशन बलवीर नगर शाहदरा, दिल्ली – ३२	१९७७

क्रम	ग्रंथ का नाम	लेखक	प्रकाशन	संस्करण
८	आधुनिक मनोविज्ञान और साहित्य	गंगाधर झा	राधाकृष्ण प्रकाशन दिल्ली – २	प्रथम १९७७
९	हिन्दी उपन्यास की शिल्प विधि का विकास	डॉ (श्रीमती) ओम शुक्ल	अनुसंधान प्रकाशन आचार्या नगर कानपुर	प्रथम १९६४
१०	साठोत्तरी हिन्दी उपन्यस बदलता व्यक्तित्व	ममता	पूर्वांचल प्रकाशन दिल्ली – ४	१९९९
११	हिन्दी उपन्यासों का शिल्प विधान	डॉ प्रदीपकुमार शर्मा	अभय प्रकाशन कानपुर – १	१९९०
१२	हिन्दी उपन्यासों का मनोविश्लेष–णात्मक अध्यनन	डॉ शर्मा गिरिधर प्रसाद	इन्द्रप्रस्थ प्रकाशन दिल्ली – ५१	१९७८
१३	जैनेन्द्र के उपन्यासों में नारी चरित्रों का मनोवैज्ञानिक धरातल	बिजली प्रभा प्रकाश	क्लासिक पब्लिसिंग कंपनी–दिल्ली–१५	१९९१

क्रम	ग्रंथ का नाम	लेखक	प्रकाशन	संस्करण
१४	मनोवैज्ञानिक हिन्दी उपन्यास के संदर्भ में एक संगोष्ठी	संपादक :– डॉ कुंज बिहारी वार्ष्णेय	गुजरात विधापीठ अहमदाबाद – १४	१९७७
१५	अद्यतन हिन्दी उपन्यास	बिन्दु भट्ट	पार्श्व प्रकाशन अहमदाबाद – १	१९९३
१६	हिन्दी उपन्यास स्थिति और गति	चन्द्रकान्त बांदिवडेकर	पूर्वोदय प्रकाशन नई दिल्ली – २	१९७७
१७	साठोत्तरी हिन्दी कहानी में पात्र और चरित्र-चित्रण	डॉ रामप्रसाद	जयभारती प्रकाशन इलाहाबाद	१९९५
१८	हिन्दी उपन्यसों में सहस्त्र बुद्धे नारी का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण	डॉ विमल	पुस्तक संस्थान कानपुर – १२	१९७४
१९	उपन्यास कार जैनेन्द्र के पात्रों मनोवैज्ञानिक अध्ययन	डॉ बलराजसिंह राणा	संजय प्रकाशन दिल्ली – ५२	१९७८
२०	हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन	डॉ गणेशन	राजपाल एण्ड सन्स कश्मीरी गेट, दिल्ली	१९६७

क्रम	ग्रंथ का नाम	लेखक	प्रकाशन	संस्करण
२१	हिन्दी वाड़ग्मय बीसवीं शदी	डॉ नगेन्द्र	विनोद पुस्तक मंदिर आग्रा – २	१९७२
२२	अज्ञेय के कथा साहित्य में नारी चित्रण	डॉ दक्षा आर जोशी	दर्पण प्रकाशन नडियाद – ३८७००१	२००४
२३	उपेन्द्रनाथ अश्क के उपन्यास साहित्य में निरूपित व्यक्ति और समाज	डॉ एच टी ठक्कर	अप्रकाशित	

क्रम	ग्रंथ का नाम	लेखक
२४	हिन्दी साहित्य के अस्सी वर्ष	शिवदानसिंह चौहान
२५	प्रेमचंद के उपन्यासों में नायक की परिकल्पना	डॉ (श्रीमती) प्रतिभा कोटक
२६	कथाकार मन्नू भंडारी	अनीता राजूरकर
२७	अज्ञेय एक अध्ययन	भोलाभाई पटेल
२८	जैनेन्द्र के उपन्यासों की विवेचना	डॉ विजयकुल श्रेष्ठ
२९	सामाजिक हिन्दी नाटको में चरित्र–सृष्टि	जयदेव तनुजा
३०	संस्कृत नाट्य शास्त्र	डॉ रमणलाल त्रिपाठी
३१	असाधारण मनोविज्ञान	डॉ मफतलाल पटेल
३२	हिन्दी नाटक में नायक का स्वरुप	राजेन्द्र कृष्ण भनोत

क्रम	ग्रंथ का नाम	लेखक
३३	विवेचना	इलाचन्द्र जोशी
३४	कथाकार इलाचन्द्र जोशी	हेमराज निर्मम
३५	शरद: व्यक्तित्व और कृतित्व	इलाचन्द्र जोशी
३६	साहित्य सर्जना	इलाचन्द्र जोशी
३७	हिन्दी उपन्यास: एक सर्वेक्षाण	महेन्द्र चतुर्वेदी
३८	मेरी प्रिय कहानियाँ	इलाचन्द्र जोशी
३९	मनोविज्ञान का इतिहास	डॉ रामइकबाल पांडेय
४०	अज्ञेय एक मनोवैज्ञानिक अध्ययन	डॉ ज्वाला प्रसाद सक्सेना
४१	द्दष्टव्य: फ्रायडवाद	महेन्द्र जोशी और मीरां जोशी
४२	मनोविज्ञान के संप्रदाय	डॉ राजगोपाल सिंह
४३	चन्द्रकान्ता	देवकीनंदन खत्री
४४	हिन्दी साहित्य का इतिहास	आ रामचन्द्र शुक्ल
४५	चन्द्रकान्ता सन्तति	देवकीनंद खत्री
४६	नूतन ब्रह्मचारी	बालकृष्ण भट्ट
४७	निर्मला	प्रेमचंद
४८	काव्य और कला तथा अन्य निबन्ध	जयशंकर प्रसाद
४९	कंकाल	जयशंकर प्रसाद
५०	शेखर: एक जीवनी भाग – १	अज्ञेय

क्रम	ग्रंथ का नाम	लेखक
५१	शेखर: एक जीवनी भाग – २	अज्ञेय
५२	नदी के द्वीप	अज्ञेय
५३	जैनेन्द्र साहित्य और समीक्षा	रामरतन भटनागर
५४	जैनेन्द्र और उनके उपन्यास	रघुनाथशरन झालावी
५५	हिन्दी उपन्यसा का विकास और नैतिकता	डॉ सुखदेव शुक्ल
५६	हिन्दी उपन्यास के सौ वर्ष	संपादक डॉ रामदरश मिश्र
५७	सुनीता	जैनेन्द्र
५८	त्यागपत्र	जैनेन्द्र
५९	कल्याणी	जैनेन्द्र
६०	सुखदा	जैनेन्द्र
६१	हिन्दीकथा साहित्य और मनोविज्ञान	डॉ देवराज उपाध्याय
६२	हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद	डॉ त्रिभुवन सिंह
६३	हिन्दी उपन्यास	शिवनारायण श्रीवास्तव
६४	इलाचन्द्र जोशी के उपन्यासों में मनोविज्ञान	डॉ यासमीन सुलताना नकवी
६५	हिन्दी के मनोविश्लेषणात्मक उपन्यास	डॉ (श्रीमती) कमलेश अग्रवाल

***

कोश – हिन्दी

(१) भारतीय साहित्य शास्त्र कोश

– डॉ राजवंश सहाय हीरा पृ ६

(२) नालंदा हिन्दी विशाल शब्द सागर पृ ६९२

(३) बृहद हिन्दी शब्द कोश – संपादक

– कालिका प्रसाद पृ ६९०

(४) व्यवहारिक पर्यायवाची कोश – पृ ९९

(५) राजपाल हिन्दी शब्द–कोश

– हरदेव बाहरी पृ २३७

(६) मानविकी पारिभाषिक कोश – साहित्यखंड

– संपादक – डॉ नगेन्द्र पृ १३५

(७) मानक हिन्दी कोश (तीसरा खंड)

– संपादक : रामचन्द्र वम्मा पृ २४८

(८) विशाल शब्द सागर :

– संपादक : श्रीनवली पृ ६९३

***

कोश – अंग्रेजी

(1) COMPEAT OXFORD REFERENCE DICTIONARY,

EDITOR : CATHERENE SOANES,

OXFORD UNIVERSITY PRESS, 2004

(2) OXFORD ENGLISH – HINDI DICTIONARY,

EDITOR : S. K. VARMA,

R. N. SAHAI

PAGE : 12

OXFORD UNIVERSITY PRESS, 2004

(3) THE NEW PENGUIN ENGLISH DICTIONARY,

EDITOR : ROBERT ALLEN

PAGE : 13

PENGUIN BOOK LID – 2000.

***

पत्र – पत्रिकाएँ (हिन्दी)

(१) भाषा – सेतकु

(२) शोध – भारती

(३) आलोचना

(४) धर्मयुग

(५) हंस

(६) ज्ञानोदय

(७) वागर्थ

(८) समकालीन साहित्य

(९) साहित्य कर्म ।

(१०) राष्ट्र वीणा: अगस्त १९९३

***